सत्यापन क्रमांक :
RAJHIN/2015/60530

ओ३म्

महर्षि दयानन्द स्मृति प्रकाश

हिन्दी मासिक

वर्ष : ६ अंक : २ १ फरवरी २०२० जोधपुर (राज.) पृ.:३६ मूल्य १५० ₹ वार्षिक

वेदों की ओर लौटो

महर्षि दयानन्द सरस्वती
(जन्म तिथि : फाल्गुन कृ.१० मंगलवार)

फागुन कृष्णपक्ष दशमी,
प्रफुल्लित अमृत करसनजी।
पुत्र जन्मा एकतेजस्वी,
मूलशंकर था नामधारी।।
अत्यधिक जिज्ञासाधारी, असत त्यागी व सत्यमानी।
हरा तम सकल विश्वव्यापी, दृष्टि दी अतिशय सुखकारी।।
ऋणी उसके सब नर नारी, क्यों न हो उसके आभारी।
जगत पंकिल, ऋषिपथगामी, खिले 'नीरज' बन नरनारी ।।

पाखण्ड छोड़ो

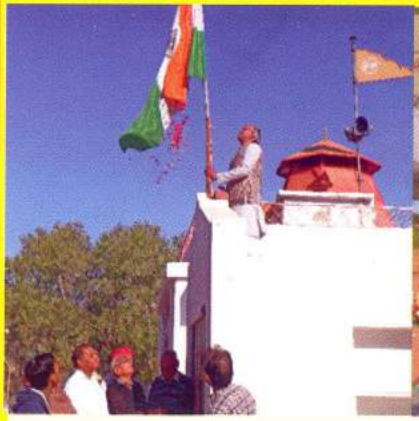

गणतन्त्र दिवस के उपलक्ष में नगर आर्य समाज गुलाबसागर जोधपुर में प्रधानजी एवं मंत्रीजी द्वारा राष्ट्रीय ध्वज का आरोहण तथा राष्ट्रगान के बाद जयकारे लगाते आर्यजन। आर्यसमाज महर्षि पाणिनीनगर के तत्वावधान में जोधपुर में आंगनवा गाँव, जसवन्त सागर बांध के निकट कच्चे झोंपड़ो में रह रहे पाक हिन्दू विस्थापितों की बस्ती मे आर्यवीर दल की शाखा संचालित की जा रही है।

आर्यसमाज द्वारा यहाँ २६ जनवरी को ध्वजारोहण के बाद आर्यवीरों और वीरांगनाओं ने जिम्नास्टिक और शस्त्र संचालन का प्रदर्शन किया।

कृण्वन्तो विश्वमार्यम् । -ऋग्वेद ९।६३।५

सबको श्रेष्ठ बनाओ

महर्षि दयानन्द स्मृति प्रकाश का मुख्य प्रयोजन

महर्षि दयानन्द सरस्वती के व्यक्तित्व, कृतित्व, व उनके द्वारा लिखित समस्त साहित्य तथा उनके सार्वभौमिक अद्वितीय कार्यों व सिद्धांतों का प्रचार-प्रसार, स्थापना व व्यवहार में साकार करने के लिये कार्य करना ।

महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास, जोधपुर का मुखपत्र

महर्षि दयानन्द स्मृति प्रकाश

वर्ष : ६ अंक : १

दयानन्दाब्द : -१९६

विक्रम संवत् : माह-फाल्गुन २०७६

कलि संवत् ५१२०

सृष्टि संवत् :१,९६,०८,५३,१२०

सम्पादक मण्डल :

प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु, अबोहर

डॉ. सुरेन्दकुमार, हरिद्वार

डॉ. वेदपालजी, मेरठ

पं. रामनारायण शास्त्री, सिरोही

आचार्या सूर्यादेवी चतुर्वेदा

कार्यवाहक सम्पादक :

कमल किशोर आर्य

Email: sampadakmdsprakash@gmail.com

9460649055

प्रकाशक : 0291-2516655

महर्षि दयानन्द सरस्वती

स्मृति भवन न्यास, जसवन्त कॉलेज

के पास, जोधपुर ३४२००१

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है । किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्याय क्षेत्र जोधपुर ही होगा ।

Web.-www.dayanadsmritinyas.org.

वार्षिक शुल्क :१५० रुपये

आजीवन शुल्क : ११०० रुपये

(१५वर्ष)

अनुक्रमणिका

	क्या	कहाँ
१.	सम्पादकीय....	४
२.	प्रार्थना-विषय.....	७
३.	वेद-वचन.....	८
४.	सूर्य का अविर्भाव....	१०
५.	दयानन्द कौन है?.....	११
६.	ऋषिगाथा...	२३
७.	आर्यसमाज का इतिहास	२६
८.	अथ गृहाश्रम संस्कारविधि.....	२९
९.	युवा पीढ़ी से कुछ तीखे प्रश्न	३०
१०.	सामूहिक विवाह संस्कार	३३
११.	हिन्दू शरणार्थियों की बस्ती में गणतन्त्र दिवस	३४

महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास

बैंक ऑफ बडौदा खाता संख्या-01360100028646

IFSC BARB0JODHPU

यह पांचवा अक्षर जीरो है

नागरिकता संशोधन अधिनियम

नागरिकता संशोधन कानून भारत में उन गैर मुस्लिमों के लिए लागू किया गया है, जिन पर पाकिस्तान, अफगानिस्तान और बांग्लादेश में मजहब के नाम पर सांप्रदायिक क्रूरता होती है। ऐसे पीड़ित गैरमुस्लिम शरणार्थियों को भारतीय नागरिकता प्रदान करने के लिए प्रवास अवधि में और दस्तावेजों के मामले में कुछ छूट दी गई है, ताकि इन परिवारों को रोजी रोटी का संकट न हो तथा इनके बच्चे ि ाक्षा से वंचित न रहे। यह भी इसलिए करना पड़ा है कि जब यह विदेशी नागरिक भारत में आते हैं तो पासपोर्ट के अतिरिक्त इनकी पाकिस्तानी नागरिकता से संबंधित दस्तावेज वही रोक लिए जाते हैं, साथ में नहीं लाने दिए जाते और इनके द्वारा दी गई जानकारी का सत्यापन भारत द्वारा चाहने पर भी इन देशों द्वारा किया नहीं जाता है।

हर कोई जानता है कि भारत के टुकड़े इस्लाम की असहिष्णुता के कारण हुए और भारत से अलग हुए राष्ट्र यह मानते हैं कि चूंकि मुसलमानों को ये राष्ट्र दिए गए; इसलिए गैर मुसलमानों का इनमें रहना संभव नहीं! गैरमुस्लिम या तो मुसलमान बने या सपरिवार गुलाम और शोषित बनकर नारकीय जिंदगी जिए या जान से हाथ धोएँ। इस प्रकार इन मुस्लिम बहुल देशों में गैर मुस्लिमों पर होने वाले अत्याचार का एकमात्र कारण भी इस्लाम की असहिष्णुता है –इसमें किसी को संदेह नहीं होना चाहिए।

बहुसंख्यक असहिष्णु मुस्लिम लोगों द्वारा, सत्ता द्वारा, समाज द्वारा पीड़ित ये लोग तीर्थ यात्रा के बहाने से, पुरखों की अस्थियां गंगा में विसर्जन करने के बहाने से, रिश्तेदारी में शादी के बहाने से भारत आते हैं और यहां शरण मांगते हैं ताकि इनके धर्म और संस्कृति की रक्षा हो जाएं। इन सताए गए पीड़ित निरीह लोगों को भारत यदि नागरिकता दे तो किसी के पेट में दर्द क्यों होना चाहिए। यदि किसी के पेट में होता है तो:

१. वे पड़ोसी मुस्लिम बहुल देशों में गैर मुस्लिमों पर होने वाले अत्याचार उनकी हत्याएं उनका जबरन धर्मांतरण और नारकीय जिंदगी के समर्थक हैं।

२. हमारी संवैधानिक धर्मनिरपेक्षता की कसौटी पर भी वे खरे नही है

३. उनकी मानवीय संवेदनाएं मर चुकी है। वे मनुष्य कहलाने योग्य नहीं है।

४. वह इस विरोध की आड़ में अपनी घृणित,असहिष्णुतावादी,असहनशील,दुष्प्रेरणास्पद और द्वेषपूर्ण सांप्रदायिकता का पालन कर रहे हैं।

५. वे यह चाहते हैं कि भारत में, विदेशों से पीड़ित होकर शरण लेने के लिए आए हिंदू लोगों के धर्म की रक्षा भी किसी भी सूरत में करने के सरकारी प्रयास नहीं हो, भले ही यहाँ की सरकारें आजादी के समय से ही अल्पसंख्यक सुविधाओं के बहाने गैर हिंदू लोगों को और विशेषकर मुसलमानों को फलने फूलने में अत्यधिक सहायता करती रही है। अर्थात् वे सरकारी संसाधन और सरकारी सामर्थ्य का उपयोग सिर्फ हिंदू विरोधी लोगों को पोषित करने में ही चाहते हैं। इन लोगों को गैर मुस्लिमों और विशेष करके हिंदू लोगों को किसी भी प्रकार दी गई सुविधा बर्दाश्त नहीं हो सकती।

६. साम्प्रदायिक आधार पर पीड़ित शरणार्थियों के प्रति भी निर्दयता और असहिष्णुता दिखाकर वे मुस्लिम बहुल राष्ट्रों में उनके उत्पीड़न को समर्थन ही नहीं दे रहे हैं, बल्कि भारत में भी उनके उत्पीड़न का कारण बन रहे हैं और भारत को उनके उत्पीड़न को सहन करते रहने हेतु दबाव बना रहे हैं। अन्यथा वे राष्ट्र में शान्ति नहीं रहने देंगे।

७. इनकी यह भावना सह अस्तित्व की हत्या है जिसके कारण कोई भी गैर मुस्लिम इस देश में मुसलमान पर भरोसा करने से पहले कई बार सोचने को बाध्य होगा कि क्या महर्षि दयानन्द सरस्वती और बाबू देवकीनन्दन खत्री ने सही कहा था?

८. कुछ फिरके और राजनीतिक दल मात्र विपक्ष में होने के कारण बिना किसी वैध कारण के विरोध करना और सरकार के विरुद्ध माहौल बनाकर देश में अराजकता पैदा करना अपना धर्म बनाए हुए हैं। उन्हें राष्ट्र और मानवता से कोई लेनादेना नहीं है।

इन लोगों को विरोध का जब कोई वाजिब कारण दृष्टिगत नहीं हुआ तो सीएए को नागरिकता रजिस्टर से जोड़ दिया। जबकि सीएए नागरिकता छीनने का नहीं, बल्कि नागरिकता देने का कानून है। दृश्य, श्रव्य एवं मुद्रित समाचार माध्यमों में सामने आया है कि ये लोग नागरिकता संशोधन कानून का विरोध इन थोथे तर्कों, पर कर रहे हैं कि:

१.**इसमें देश के लोगों को बांटने की साजिश है।** क्या साजिश है– यह कोई नहीं बताता! सिर्फ निराधार तथ्यों को परोसा जा रहा है।

२. **ये लोग कहते हैं कि सीएए गरीबों के खिलाफ साजिश है, क्योंकि गरीब लोगों के पास कागज नहीं है।** सीएए के तहत किसी भारतीय के नहीं वरन् मुस्लिम बहुल तीन देशों से आए वहाँ के पीड़ित गैरमुस्लिम नागरिकों को भी दस्तावेज नहीं या पूर्ण नहीं होने के बाद भी नागरिकता देने का विधान है। निकालने का तो कोई प्रावधान इसमें है ही नहीं।

३. **औरतों और बच्चों तक को इस बहकावे में लेकर आंदोलन में डाला गया है कि सीएए भारत से मुसलमानों को निकालने की साजिश है।** जबकि सारे नेता और राजनीतिक दल यह जानते हैं कि **ढाई पृष्ठ के इस कानून** में ऐसा कुछ भी नहीं है। क्या राहुल ने नया कानून नहीं पढ़ा? क्या मुस्लिम सांसदों ने नहीं पढ़ा? क्या मुसलमान मुल्लो ने नहीं पढ़ा? क्या मुस्लिम नेताओं ने नहीं पढ़ा है? **निश्चित रूप से सभी ने पढ़ा है। उन्हें रेखांकित करके बताना चाहिए कि कानून का यह प्रावधान गलत है।** किन्तु कोई नहीं बता रहा अर्थात् खामी कानून में नहीं है। बल्कि कीड़ा दिमाग में है जिसका निकालना जरूरी है।

सब लोगों को, विशेषकर मुस्लिमों और विरोध करने वाले अन्य लोगों को भी समझना चाहिए कि

१. जिन गरीबों के हिमायती बन कर सांप्रदायिक नेता और राजनीतिक दल सामने आ रहे हैं, वे नेता और दल इतने सालों में इन तथाकथित गरीबों के लिए कागजात क्यों नहीं बनवा पाए और अब भी बनवाने में उन्हें क्या दिक्कत है? क्या जनसेवा वे नहीं चाहते?

२. भारत में नागरिकता के लिए आवेदन करने वाले कितने मुस्लिमों को मनाही की गई है, या इस संशोधन में मनाही का प्रावधान है?

३. राष्ट्रीय नागरिकता रजिस्टर का भी जो लोग विरोध कर रहे हैं, उन्हें विरोध छोड़कर

इसका समर्थन करना चाहिए। क्या नुकसान है? गरीब से गरीब का बीपीएल कार्ड बना है, आधार कार्ड बना है। नहीं बना तो उनके क्षेत्र के सांसद, विधायक, जनप्रतिनिधि और रानैतिक दल क्या कर रहे थे? राशन की लाइन में जो राशनकार्ड लेकर, अस्पतालों में बीपीएल कार्ड लेकर, मोबाइल सिम लेने के लिए पहचान के दस्तावेज लेकर घण्टों खड़े रहने वाले कौन लोग है जो राष्ट्र का नागरिकता रजिस्टर बनाने में सहयोग का विरोध करते हैं?

४. जो लोग भारत में बिना औपचारिकता पूरी किए, बिना आवेदन किए, धन, मज़हब या रसूखात के बल पर नागरिकता ले चुके हैं, वे लोग और राष्ट्र के उनअपराधियों के लिए मज़हबी आधार पर संवेदना रखने वाले लोग ही इस आंदोलन के पीछे हैं, सीएए जैसे संशोधन के भी पीछे पड़े हैं, जो किसी की नागरिकता छीनने का है ही नहीं।

५. इस आन्दोलन को सुनियोजित रूप से पूरे भारत में फैलाया जा रहा है। सुनियोजित रूप से अमन की अपील के कोडवर्ड से दंगे फैलाकर पाकसाफ होने का नाटक किया जा रहा है। यह संकेत है इस बात का कि सावधान हो जाओ! एक बार फिर हमारे लिए न देश महत्त्वपूर्ण है और न दूसरे धर्म। हम चाहेंगे तो ही देश में व्यवस्था रहेगी, अन्यथा नहीं।

६. कांग्रेस जैसे दलों को समझना चाहिए कि यदि मूस्लिम लोग उसकी वोट बैंक होती तो मुसलमान जिन्ना के पीछे लामबंद नहीं होते और पाकिस्तान में कांग्रेस की सरकार होती! कांग्रेस के पीछे मुसलमान आए या कांग्रेस पाकिस्तान बनाने के लिए मुसलमानों के हाथ की कठपुतली बन गई। कांग्रेस को सांप्रदायिकता और छद्मधर्मनिरपेक्षता छोड़नी चाहिए।

७. भारत में करोड़ों बांग्लादेशी और पाकिस्तानी मुस्लिम भी आ करके बस गए। उनके नागरिकता की पहचान के कार्ड बन गए और वे भारत की छाती पर मूंग दल रहे हैं बिना वैध नागरिकता लिए। यह हमारा दुर्भाग्य है कि या तो मजहब के नाम पर, दारुल इस्लाम के नाम पर या राजनैतिक दबाव से वोटों के खातिर या रिश्वत के दम पर इन लोगों ने छद्म नागरिकता हासिल की है जो हर प्रकार से गलत है। नागरिकता रजिस्टर का विरोध भी ऐसे घुसपैठियों के हिमायती ही कर रहे हैं।

८. मैं चाहता हूँ कि इस्लाम के अध्ययन के आधार पर मेरा यह चिंतन कभी तो मिथ्या प्रमाणित हो कि सज्जन से सज्जन मुस्लिम भी यह गारण्टी नहीं दे सकता कि इस्लाम की शिक्षा लेकर उसकी संतान इस्लाम की उस असहिष्णुता, क्रूरता और असंवाद की मनःस्थिति से अलग रह सकेगा, जिससे पूरा विश्व पीड़ित है। मेरे इस चिंतन को मिथ्या साबितकरने का दायित्व मुसलमानों का है।

आर्यों! जग को जगाने वाला आर्यसमाज है!

वैदिक दिनचर्या तो व्यक्तिगत और पारिवारिक दायित्व है। उससे आर्य बनते हैं।

लेकिन आर्यसमाजी बनने का तात्पर्य समाज, राष्ट्र और विश्व के कल्याण में लग जाना होता है! स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज का स्मरण करके अपने आर्यसमाजी होने को सार्थक करें!

–कमलकिशोर आर्य

प्रार्थना-विषय :

गणानां त्वा गणपतिꣳ हवामहे प्रियाणां त्वा प्रियपतिꣳ हवामहे निधीनां त्वा निधिपतिꣳ हवामहे वसो मम । आहमजानि गर्भधमा त्वमजासि गर्भधम् ।।४६।।-यजुः० २३।११

व्याख्यान-हे समूहाधिपते ! आप मेरे "**गणानाम्**" गण=सब समूहों के पति होने से आपको "**गणपतिम्**" गणपति नाम से "**हवामहे**" ग्रहण करता हूँ तथा मेरे "**प्रियाणाम्**" प्रिय कर्मकारी, पदार्थ और जनों के "**पति**" पालक भी आप ही हैं, इससे "**त्वा**" आपको "**प्रियपतिम्**" "**प्रियपति**" मैं अवश्य जानूँ, एवं मेरी "**निधीनां त्वा निधिपतिम्**" सब निधियों के पति होने से आपको मैं निश्चित निधिपति जानूँ। हे "**वसो**" सब जगत् जिस सामर्थ्य से उत्पन्न हुआ है, उस "**गर्भ**" स्वसामर्थ्य का धारण और पोषण करनेवाला आपको ही मैं जानूँ। "**गर्भधम्**" गर्भ सबका कारण आपका सामर्थ्य है, यही सब जगत् का धारण और पोषण करता है । यह जीवादि सशरीर प्राणिजगत् तो जन्मता और मरता है, परन्तु आप सदैव "**अजा असि**" अजन्मा और अमृतस्वरूप हैं । आपकी कृपा से मैं अधर्म, अविद्या, दुष्टभावादि को "**अजानि**" दूर फेकू तथा हम सब लोग आपकी ही "**हवामहे**" अत्यन्त स्पर्धा (प्राप्ति की इच्छा) करते हैं, सो आप अब शीघ्र हमको प्राप्त होओ, जो प्राप्त होने में आप थोड़ा भी विलम्ब करेंगे तो हमारा कुछ भी कहीं ठिकाना न लगेगा ।।४६।।

स्तुति-विषय

अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि तच्छकेयं तन्मे राध्यताम् ।

इदमहमनृतात्सत्यमुपैमि ।।४७।। -यजु. १।५।

व्याख्यान-हे "**अग्ने**" सच्चिदानन्द, स्वप्रकाशरूप ईश्वराग्ने ! "**व्रतम्**" ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ, संन्यास आदि सत्यव्रतों का "**चरिष्यामि**" आचरण मैं करूँगा, सो इस व्रत को आप स्वकृपा से सम्यक् "**राध्यताम्**" सिद्ध करें तथा मैं "**अनृतात्**" अनृत=अनित्य देहादि पदार्थों से पृथक होके इस यथार्थ सत्य जिसका कभी व्यभिचार-विनाश नहीं होता, "**सत्यम् उप एमि**" उस सत्याचरण, विद्यादि लक्षण धर्म को प्राप्त होता हूँ, "**तत् शकयेम्**" इस मेरी इच्छा को आप पूरी करें, जिससे मैं सभ्य, विद्वान्, सत्याचरणी, आपकी भक्तियुक्त धर्मात्मा होऊँ।।४७।।

वेद-वचन

श्रेष्ठ जीवन

त्वया वयमुत्तमं धीमहे वयो, बृहस्पते पप्रिणा सस्त्रिना युजा ।
मा नो दुःशंसो अभिदिप्सुरीशत प्रसुशंसा मतिभिस्तारिषीमहि ।।

ऋग्वेद-२।२३।१०

पदार्थः- हे **(बृहस्पते)** विद्वान् ! **(पप्रिणा)** परिपूर्ण **(सस्त्रिना)** शुद्ध पवित्र पदार्थ **(युज)** युक्त **(त्वया)** तुम्हारे साथ वर्तमान **(वयम्)** हम लोग **(उत्तमम्)** श्रेष्ठ **(वयः)** जीवन को **(धीमहे)** धारण करें, जिससे **(अभिदिप्सुः)** सब ओर से कपट की इच्छा करनेवाला **(दुःशंस)** जिसकी दुष्ट कहावत प्रसिद्ध वह चोर **(नः)** हम लोगों का **(मा, ईशत)** ईश्वर न हो और **(मतिभिः)** प्रजाओं के साथ वर्तमान **(सुशंसाः)** जिनकी सुन्दर स्तुति ऐसे हम लोग **(प्र, तारिषीमहि)** उत्तमता से तरें, सर्वविषयों के पार पहुँचें ।

भावार्थः- जो पूर्ण विद्यावाले योगी शुद्धात्मजनों का संग करते हैं, वे दीर्घजीवी होते हैं; जो विद्वानों के सहचारी होते हैं, उन्हें दुःख देने को कोई भी समर्थ नहीं हो सकता ।

संग्राम विजेता नारियाँ

अवसृष्टा परा पत शरव्ये ब्रह्मसंशिते ।
गच्छामित्रान्प्र पद्यस्व मामीषां कञ्चनोच्छिषः।। -यजु.

पदार्थः-हे **(शरव्ये)** बाणविद्या में कुशल **(ब्रह्मसंशिते)** वेदवेत्ता विद्वान् से प्रशंसा और शिक्षा पाये हुए सेनापति की स्त्रि ! तू **(अवसृष्टा)** प्रेरणा को प्राप्त हुई **(परा, पत)** दूर जा । **(अमित्रान्)** शत्रुओं को **(गच्छ)** प्राप्त हो और उनके मारने से विजय को **(प्र, पद्यस्व)** प्राप्त हो । **(अमीषाम्)** उन दूर देश में ठहरे हुए शत्रुओं में से मारने के बिना **(कं, चन)** किसी को **(मा, उच्छिषः)** मत छोड़ ।

भावार्थः-सभापति आदि को चाहिए कि जैसे युद्धविद्या से पुरुषों को शिक्षा करें, वैसे स्त्रियों को भी शिक्षा करें । जैसे वीर पुरुष युद्ध करें, वैसे स्त्री भी करें। जो युद्ध में मारे जावें उनसे शेष, अर्थात् बचे हुए कातरों का कारागार में निरन्तर स्थापना करें ।

सदुपदेश से दुर्गुण-नाश

आ नो वयो वयः शयं महान्तं गह्वरेष्ठाम् ।

महान्तं पूर्विनेष्ठामुग्रं वचो अपावधीः ।। साम. ३५३ ।।

पदार्थः- हे योगविद्यादि ऐश्वर्ययुक्त विद्वान्! हे परम् ऐश्वर्यवान् परमात्मा ! आप **(नः)** हमारी **(वयः)** आयु तथा **(महान्तम्)** बड़े **(गह्वरेष्ठाम्)** अन्तःकरण में स्थित **(वयः शयम्)** आयु में निवास करनेवाले आत्मा और **(महान्तम्)** बड़े **(पूर्विनेष्ठाम्)** क्रमागत बुद्धिः तत्त्व को **(आ)** आदेश कीजिए । हमारे **(उग्रम् वचः)** भयानक वचन को **(अपावधीः)** दूर कीजिए ।

भावार्थः- विद्वानों के सदुपदेश से और परम पिता परमात्मा की प्रेरणा से मनुष्यों के आत्मा और मन को उत्तम आदेश मिलता है और दुर्वचन आदि दुर्गुण दूर होते हैं । साथ ही साथ ही सार्थक दीर्घायु के साधन भी ज्ञात औरश प्राप्त होते हैं ।

शुभ कर्म करो

स्वाक्तं मे द्यावापृथिवी, सवाक्तं मित्रो अकरयम् ।

स्वाक्तं मे ब्रह्मणस्पतिः स्वाक्तं सविता करत् ।।-७।३१।१

पदार्थः-**(द्यावापृथिवी)** सूर्य और पृथिवी ने **(मे)** मेरा **(स्वाक्तम्)** स्वागत किया है । **(अयम्)** इस **(मित्रः)** मित्र, माता-पिता आदि ने **(स्वाक्तम्)** स्वागत **(अकः)** किया है । **(ब्रह्मणः)** वेद-विद्या का **(पतिः)** रक्षक आचार्य **(मे)** मेरा **(स्वाक्तम्)** स्वागत और **(सविता)** प्रजा-प्रेरक शूर पुरुष **(स्वाक्तम्)** स्वागत **(करत्)** करें ।

भावार्थः- मनुष्य सदा ऐसे शुभ कर्म करे जिससे संसार समस्त द्युलोक और पृथिवीलोक, माता-पिता, भाई बंधु आदि स्वजन और सृहृदयजन, वेदज्ञ विज्ञान, आचार्य, प्रजा के प्रेरक शासक वर्ग और जगदुत्पादक, सन्मार्ग प्रेरक परमात्मा सहित संसार सब पदार्थ और विद्वान् लोग उसके उपकारी होवें।

विशेषसूचना

सभीआर्यजनों, विशेषकर आर्यविद्वानों, आर्यनेताओं, आर्यश्रेष्ठियों, आर्यउपदेशकों एवं आचार्यश्री के सभी स्वजनों से प्रार्थना है कि आर्यजगत के उच्चतमकोटि के मूर्धन्य वैदिक विद्वान आचार्य स्व0 सत्यानन्दजी वेदवागीश की स्मृति में इस पत्रिका का विशेषांक निकाला जा रहाहै।

आचार्यश्री के संबंध में अपने संस्मरण, प्रेरक घटनाओं व विचारो को लेखबद्ध कर यथाशीघ्र महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास को भिजवाने की कृपाकरावें।

साथ ही इस अंक की प्राप्ति सुनिश्चित करने हेतु पत्रिका के ग्राहक अवश्य बनें। केवल पंजीकृत ग्राहकों को ही पत्रिका भिजवाई जाती है।

सूर्य का अविर्भाव

-वेदमञ्जरी से

धीरासः पदं कवयो नयन्ति, नाना हृदा रक्षमाणा अजुर्यम् ।
सिषासन्तः पर्यपश्यन्त सिन्धुम्, आविरेभ्यो अभवत् सूर्यो नृत् ।।-ऋग् १.१४६.४

ऋषिः **दीर्घतमाः** । देवता **अग्निः** । छन्दः **त्रिष्टुप्** ।

(धीरासः) धीमान् **(कवयः)** क्रान्तदर्शी लोग **(नाना)** अनेकविध **(हृदा)** हृदय से **(रक्षमाणाः)** रखवाली करते हुए **(अजुर्यम्)** अजर परमेश्वर को **(पदं)** आराध्य-पद पर **(नयन्ति)** ले जाते हैं, प्रतिष्ठित करते हैं, प्रतिष्ठित करते हैं । **(सिषासन्तः)** भक्ति के इच्छक [वे] **(सिन्धुम्)** [गुणों के] सिन्धु [उस परमेश्वर] को [तथा] **(नृन्)** [उसके] नेतृत्व-सामर्थ्यों को **(पर्यपश्यन्त)** साक्षात् करते हैं । **(सूर्यः)** सूर्य **(एभ्यः)** इनके लिए **(आविः अभवत्)** आविर्भूत हो जाता है ।

संसार में दो प्रकार के मनुष्य होत हैं, धीर और अधीर । अधीर (अविवेकी) लोग इसमें विश्वास नहीं करते कि कोई तेजोमय शक्ति (अग्नि परमेश्वर) है जो इस सारे विश्व का संचालन करती है । परन्तु जो धीर (विवेकी) और कवि (क्रान्तद्रष्टा) जन होते हैं, वे परमेश्वर में पूर्णत विश्वास रखते हैं । वे आस्तिक लोग अजर-अमर परमेश्वर को आराध्य-पद पर प्रतिष्ठित करते हैं और सच्चे भाव से उसकी आराधना करते हैं । आराध्यदेव को मन की दस्यु-वृत्तियाँ कहीं चुरा न ले जायें इसके लिए भी वे सतर्क रहते हैं । वे हृदय की अनेकविध सद्वृत्तियों को नियुक्त कर देते हैं जो उनके अर्चनीय देव की सतत चौकसी करती रहती हैं । इस प्रकार अपने उपास्य अग्नि प्रभु की रखवाली का पूर्ण प्रबन्धकर धीर उपासक कवि लोग प्रभु-भक्ति का पवित्र यज्ञ रचाते हैं । गुणों के सिन्धु उस परम प्रभु की पुनः अर्चना करते हैं । जब उनकी भक्ति-अर्चना चरमोत्कर्ष पर पहुँच जाती हैं, तब अन्ततः उन्हें प्रभु का साक्षात्कार हो जाता है । वे प्रभु को हस्तामलकवत् अपने सम्मुख स्थित पाते हैं जिसे देख उनका रोम-रोम हर्षित हो उठता है । प्रभु-दर्शन के साथ-साथ वे इसका भी प्रयत्क्ष दर्शन कर लेते हैं कि किस प्रकार प्रभु अपने नेतृत्व-सामर्थ्यों से अपनी उन्नायक शक्तियों द्वारा एक निचले स्तर पर खड़े व्यक्ति को उठाकर ऊर्ध्व स्तर पर पहुँचा देते हैं। प्रभु का साक्षात्कार कर लेने के पश्चात् वे स्पष्ट रूप से देखते हैं कि उनके मानस-पटल का अन्धकार पूर्णत विलुप्त हो गया है और उनके सम्मुख सूर्य-सम प्रखर अध्यात्मप्रकाश आविर्भूत हो गया है। उस विराट् ज्योति को, उस अन्तःप्रकाश को पाकर उनके हृदय की ग्रन्थि खुल जाती है, समस्त संशय विच्छिन्न हो जाते हैं ।

आओ, हम भी अग्नि प्रभु को आराध्यदेव के रूप हृदय में प्रतिष्ठित करें और सद्गुणों के सिन्धु उस परम प्रभु का साक्षात्कार कर अपने अन्तरात्मा में सूर्य-सम ज्योति को अवतीर्ण करें ।

-'डॉ. रामनाथ वेदालंकार'

दयानंद कौन है

(शूद्रों का सच्चा उद्धारक)

विश्व के किसी भी भाग में बसने वाले मनुष्यों के बीच बुद्धि, बल, धन या जन्म के आधार पर विभाजन होता ही है जिसके परिणामस्वरूप समाज में कुछ लोग वि ेश सुख प्राप्त करते हैं और शेष लोग अभिशप्त जीवन व्यतीत करते हैं। अफ्रीका के कबीलों से लेकर के यूरोप के आधुनिक समाज तक में विभाजन पाया जाता है। दास या गुलामी प्रथा कहाँ प्रचलित नहीं थी? दुनिया में सभ्य कहे जाने वाली अंग्रेज कौम ने भारत में आकर भी दास बना कर विदेशों में निर्यात किया। अर्थात्

मानव मानव में असमानता विश्वव्यापी रही है। तब हम भारत में भेदभाव देखकर आत्मप्रवंचना क्यों करें? इस आत्म प्रवचना का विशेष कारण यह है कि भारत में भेद को संहिताबद्ध करके धर्म का रूप दे दिया गया और ऊँच–नीच का आधार विशेषकर जन्म और गौण रूप से लिंग, क्षेत्र, व्यवसाय और व्यवहार को भी बना दिया गया।

विश्व भर में कानून बन जाने से, या मानवतावादी आंदोलनों से या विवेक की जागृति से दासप्रथा बंद हो गई। यह अलग बात है कि आपराधिक रूप से जैसे बंधुआ मजदूरी भारत में होती है, वैसे ही मुस्लिम देशों में, अफ्रीका में और अन्य कई विकसित देशों सहित विश्वभर में भी होती है और इसका शिकार क्षेत्र, जन्म या व्यवसाय न होकर कुछ भी और विशेषकर के अवसर या परिस्थिति होता है। किंतु भारत में कानून बन जाने के बाद भी यह जन्म, लिंग और क्षेत्र आधारित असमानता और उत्पीड़न बंद नहीं हुआ है– यही सोचने की बात है। शास्त्रीय विधानों की विडंबना देखिए। प्रक्षिप्तिकरण के कारण अपने मूल से बीसीयों गुना हो चुके ग्रन्थ महाभारत के अनुशासन पर्व से व्यवस्था देते हैं: –

तिर्यग्योनिगतः सर्वो मानुष्यं यदि गच्छति। स जायते पुल्कसो वा चाण्डालो वाऽप्यसंशयः।। पुल्कसः पापयोनिर्वा यः कश्चिदिह लक्ष्यते। स तस्यामेव सुचिरं मतङ्ग परिवर्तते।। ततो दशशते काले लभते शूद्रतामपि। शूद्रयोनावपि ततो बहुशः परिवर्तते।। ततस्त्रिंशद्गुणे काले लभते वैश्यतामपि। वैश्यतायां चिरं कालं तत्रैव परिवर्तते।। ततः षष्टिगुणे काले राजन्यो नाम जायते। ततः षष्टिगुणे काले लभते ब्रह्मबन्धुताम्।। ब्रह्मबन्धुश्चिरं कालं ततस्तु परिवर्तते। ततस्तु द्विशते काले लभते काण्डपृष्ठताम्।। काण्डपृष्ठश्चिरं कालं तत्रैव परिवर्तते। ततस्तु त्रिशते काले लभते जपतामपि।। तं च प्राप्य चिरं कालं तत्रैव परिवर्तते। ततश्चतुःशते काले श्रोत्रियो नाम जायते।।

अर्थात् पशुयोनि का जीव जब पहली बार मनुष्य बनता है तो म्लेच्छ या चांडाल बनता है। हे मतङ्ग !! फिर वह उसी म्लेच्छ योनि में बहुत जन्मों तक बना रहता है।। फिर हजार जन्मों के काल के बराबर समय बिताकर उसे शूद्रयोनि मिलती हैं जहां फिर वह बहुत से जन्म लेता है।। वहाँ तीस जन्म बिताकर (यदि वह अपने वर्णगत धर्म का पालन करता रहा, तो)

वैश्य वर्ण में जन्म लेता है और पुनः कई जन्मों तक वैश्य ही रहता है।। वहाँ साठ जन्म बिताकर वह क्षत्रिय कुल में जन्म लेता है और फिर साठ जन्मों तक क्षत्रिय रहकर ब्राह्मण कुल में जन्म लेता है।। यहाँ केवल वह ब्रह्मबन्धुत्व की स्थिति में रहता है, यानि जन्म मिला है, कर्म ब्राह्मण के नहीं हैं।। ब्रह्मबन्धुत्व की स्थिति में जब दो सौ जन्म बीतते हैं तब उसका जन्म वेदज्ञानी ब्राह्मण कुल में होता है।। ऐसे कुल में तीन सौ जन्म लेने के बाद वह ब्राह्मण के आचरण और गायत्री आदि के संस्कार से भी युक्त हो जाता है।। इस प्रकार से जन्मना ब्राह्मण होकर कर्मणा भी जब वह ब्राह्मण बनता है, तो ऐसे स्तर के चार सौ जन्मों के बाद इसे ब्रह्मबोध होता है।।

किन्तु इसी प्रकरण में आने वाले एक और श्लोक **"तदेवं शोकहर्षौ तु कामद्वेषौ च पुत्रक। अतिमानातिवादौ च प्रविशेते द्विजाधमम्।।"** को कहीं भी उद्धृत नहीं किया जाता। यह श्लोक दुर्गुणग्रस्त हो जाने पर द्विज के अधम हो जाना घोषित करता है।

समाज में उदात्ता की स्थिति बनाए रखने के लिए सभी वर्णो को अत्यधिक श्रमसाध्य और निरंतर तपोसाध्य जीवन व्यतीत करना पड़ता है। किंतु ब्रह्मवेत्ता होने के कारण निर्भय, निःसंग और निर्लिप्त भाव से समाज में व्यवस्था जो देता है, वह ब्राह्मण समाज का सिर या मस्तिष्क कहा जाता है और समाज के अन्य वर्ण उसका अत्यधिक सम्मान करते हैं। सम्मान को प्राप्त इस वर्गके निर्योग्य लोगों नेमोह से ग्रस्त होकर स्वजनों के सुख के लिए गुणकर्मस्वभावाधारित वर्णव्यवस्था को जन्माधारित व्यवस्था में परिवर्तित किया, समाज में लाभ की स्थिति को बिना श्रम और तप किए बनाए रखने के लिए शास्त्रों में प्रक्षिप्तकरण भी किया और अनार्श ग्रंथ भी रचे। यही व्यवस्था अन्य वर्णों के लिए भी स्थापित की। सभी वर्ण जब जन्म से ही होने लगे व समाज रूपी शरीर का मस्तिष्क खराब हो गया तो शरीर का क्या होगा सहज कल्पना कर सकते हैं! अनपढ़ और अपराधी भी ब्राह्मण देवता होने लगे! कायर और भोग विलासी क्षत्रिय होने लगे! समाज का धन केंद्रित करने वाले दानभावविहीन लोग वैश्य होने लगे! तो समाज की सब व्यवस्था का भार शूद्र कहलाने वाले वर्ण पर आ गया। जन्मना जातिवाद ने समाज में ऊँच–नीच, भेदभाव, शोषण, अन्धवि वासों और कुरीतियों को जन्म दिया और समाज छिन्न–भिन्न हो गया।इसका परिणाम देश और धर्म के विनाश के रूप में सामने आया। किंतु देश और धर्म के विनाश को अनुभव करते हुए भी अपने स्वार्थ सिद्धि में लगे मुख्यतः ब्राह्मण वर्ग ने समाज को सही दिशा नहीं दी। अपितु हर स्थिति को अपने सुख सम्मान और वैभव को सुरक्षित रखने के लिए अनार्ष ग्रंथों की रचना और आर्ष ग्रंथों में प्रक्षेप करके जो व्यवस्थाएं दी उनके कुछ उदाहरण देखिएः

ब्राह्मणो जन्मना श्रेयान् सर्वेषां प्राणिनामिह। बालयोरनयोर्नृणां जन्मना ब्राह्मणो गुरुः। (श्रीमद्भागवत) **जन्मना जायते शूद्रः संस्काराद्विज उच्यते।। ब्राह्मणो हि महद्भूतं जन्मना सह जायते।।** (स्कन्दपुराण) **स्त्रीशूद्रबीजबंधूनां न वेदश्रवणं स्मृतम्। तेषामेवहितार्थाय पुराणानि तानि वै।** (औशनस उपपुराण) **क्षत्रियो वाथ वैश्यो वा कल्पकोटिशतेन च।। तपसा ब्राह्मणत्वं च न प्राप्नोति श्रुतौ श्रुतम् ।**(श्रीमद्देवीभागवत

महापुराण, ब्रह्मवैवर्त पुराण)

अर्थात् जन्म से ही ब्राह्मण सभी प्राणियों में श्रेष्ठ है। ब्राह्मण जन्म से ही सभी मनुष्यों का गुरु है। यहाँ जन्म से शूद्र इसीलिए कहा क्योंकि असंस्कृत व्यक्ति की शूद्रवत् संज्ञा है। जैसे शूद्र को वेदाध्ययन का अधिकार नहीं, वैसे ही अनुपवीती ब्राह्मण को भी नहीं। इसीलिए उसी स्कन्दपुराण में फिर कहा :– ब्राह्मण जन्म से ही महान् है। स्त्री और शूद्र हेतु वेदश्रवण का निषेध ऊपर के वाक्य से और नीचे के भी प्रमाणों से मिलता है। इसीलिए उनके कल्याण के लिए पुराणों का प्रणयन किया गया। क्षत्रिय और वैश्य भी करोड़ों कल्पों तक तपस्या करके भी केवल तपस्या के दम पर ब्राह्मण नहीं बन सकते।

कहने को तो ये व्यवस्था मात्र ब्राह्मणों के लिए है। किन्तु एक वर्ण के लिए जन्म से जो सत्य है, अन्य वर्णों के लिए भी वह लागू मान ली गई।

जन्म से ही अपनी श्रेष्ठता की घोषणा करते और सबके अग्रज बताने की झौंक मे बृहदारण्यकोपनिषद् को भी उद्धृत करते हैं: **"ब्रह्म वा इदमग्रआसीदेकमेव सृजत क्षत्रं यान्येतानि स नैव व्यभवत् स विशमसृजति स नैव व्यभवत्स शौद्रंवर्णमसृजत्।"** अर्थात् सबसे पहले ब्राह्मण वर्ण ही था । उसने क्षत्रिय वर्णका सृजन किया । वह ब्राह्मण क्षत्रिय का सृजन करने के बाद भी अपनी वृद्धिमें सक्षम नही हुआ, तब उसने वैश्य वर्ण का सृजन किया। इसके अनन्तर (अर्थात् क्षत्रिय और वैश्यकी रचनाके बाद) भी वह ब्रह्म प्रवृद्ध न हो सका,तब उसने शूद्र वर्णकी रचना की।

महाभारत के अनुशासन पर्व के उपर्युक्त उद्धरण को बृहदारण्यकोपनिषद् का यह उदाहरण प्रश्नगत करता है। किन्तु किसी भी अन्तर्विरोध से अप्रभावित ये धूर्त लोग निर्लज्ज होकर अन्य कुतर्क गढ़ते रहे हैं। शास्त्रीय आदेशों का अनर्थ करते हैं, सत्य बोलने वाले को धर्मद्रोही बताते हैं। दुर्भाग्य यह है कि लम्बे समय से चली आ रही इस व्यवस्था से पीड़ित लोगों को भाग्यवाद नाम का मद्य पिलाकर सुला दिया है। कुछ जागे हुए पीड़ित आरक्षण नाम की एक और नशीली गोली लेकर प्रसन्न है किन्तु इसके लिए आपस में लड़ते हैं। आरक्षण के दायरे से एक जाति को बाहर निकालने के लिए दूसरी जाति के चलाए मुकदमे न्यायालयों में चल रहे हैं। जिस संस्कृति ने **"वसुधैव कुटुम्बकं"** का संदेश दिया था, यह हाल उस संस्कृति का है।

आर्य जगत के यशस्वी विद्वान स्वर्गीय डॉक्टर धर्मवीर जी कहा करते थे कि यदि वर्ण और जाति व्यवस्था जन्मना है और यह परमात्मा और शास्त्रों का आदेश है तो ब्राह्मण लोग दाऊदी बौहरा लोगों में और क्षत्रिय लोग कायमखानी मुसलमानों से रोटी बेटी का संबंध क्यों नहीं रखते? यदि वर्ण और जाति तो जन्म से होती है, तो हिंदू की बजाए मुसलमान बन जाने मात्र से क्या फर्क पड़ता है? किंतु इन धूर्त लोगों को कुछ समझना ही नहीं है। क्योंकि समझने का तात्पर्य है समाज में अपनी लाभ की स्थिति को छोड़ने को तैयार होना–जो ये लोग नहीं चाहते।

समाज में लागू व्यवस्था में लाभ की स्थिति में रह रहे लोग चाहे वह जन्मना हो चाहे कर्मणा, हमेशा उस स्थिति को बनाए रखने वाली व्यवस्था में किसी भी परिवर्तन का विरोध करते हैं। यह बात सिर्फ भारत पर ही नहीं वरन् विश्व भर के लिए सच है। सभी राष्ट्रों के सत्ताधीश लोग नहीं चाहते कि उनकी सत्ता जाए। सत्ता के लिए और सत्ता में अधिकाधिक लाभ अर्जित करने के लिए वे शासितों का उत्पीड़न कर, कानून और बल के द्वारा निरंतर करते रहते हैं। अमरीका के चुनावों में रूस की मदद तक लेते हैं। धार्मिक व्यवस्था में उपदेशक या धर्मझंडाबरदार के रूप में बैठे लोग कभी नहीं चाहते कि उनके द्वारा धर्म के नाम पर दी जा रही अंधविश्वासों और असत्य की अफीम के नशे से उनके धर्मानुयाई कभी मुक्त हो। इसीलिए ईसाई भी सत्यार्थप्रकाश को दूर रखते हैं और मुसलमान भी। असत्य, अन्याय और अज्ञान पर आधारित ये मतवादी लोग सिर्फ सत्य के विरुद्ध ही नहीं लड़ते, किंतु आपस में भी लड़ते हैं। अर्थात स्वार्थ के कारण असत्य भी असत्य से लड़ता है। अपने अनुयायियों को ये अपने भ्रमजालया मायाजाल से बाहर आने से हरसंभव प्रकार से रोकते हैं। इसका उदाहरण इस्लाम ग्रहण किए व्यक्ति द्वारा इस्लाम त्यागने पर उसे वाजिब–उल–कत्ल घोषित कर देना है। हिंदुओं में भी जाति के बाहर संबंध करने पर युवक–युवतियों को मौत के घाट उतार देना इन्हीं कबीलाई चिंतन का उदाहरण है।

पाश्चात्य देशों में विज्ञान, मानवाधिकार और समानता की बात बढ़–चढ़कर की जाती है। किंतु इन देशों में भी विशेषतया ईसाइयत का बोलबाला है। बाइबल के गपोड़ों को कुछ लोग प्रश्नगत भी करते हैं, किंतु बड़े–बड़े वैज्ञानिक, सैनिक अधिकारी, दार्शनिक भी चर्च में जाते हैं, बाइबल का पाठ सुनते हैं, लेकिन लंबी अवधि से कई पीढ़ियों के संस्कारों से असत्य को सहन करना उनका भी स्वभाव बन चुका है। जब किसी भी देश में एक से अधिक संप्रदाय प्रभावी संख्या में हुए हैं, तो उनमें स्वार्थ के लिए भी संघर्ष होता है। लंबे समय तक मुस्लिम और इस्लामी मिलीशियाओं के मध्य संघर्ष हुए हैं और हो रहे हैं। जैसे–जैसे असहिष्णु संप्रदाय किसी भी देश में प्रभावी संख्या में जमा हो रहे हैं वहाँ भी अंतर्संघर्ष उभर कर सामने आ रहा है।

भारत के अलावा किसी भी अन्य देश में गलत चिंतन और विचार को छोड़ने और सत्य को ग्रहण करने की बात नहीं होती। इसलिए कि सभी जानते हैं कि उनके मत या संप्रदाय का आधार सही नहीं है। किंतु वे दूसरों की कमियों को बहाना बनाकर संघर्ष करते हैं। भारत के अलावा अन्यत्र कहीं भी इतना उन्नत दर्शन है ही नहीं कि वह नीरक्षीर विवेक से सत्य और असत्य को अलग अलग कर सकें।

दुर्भाग्य यह है कि अथाह वैज्ञानिक उन्नति को प्राप्त समाज भी मत संप्रदाय या दार्शनिक धरातल पर सत्य का निर्धारण करने में असमर्थ है। यही कारण है कि विश्व में प्रतिक्रिया स्वरूप उत्पन्न मिथ्या वादों और संप्रदायों को चुनौती मात्र भारत द्वारा ही मिली है। **किंतु यह बहुत बड़ा भ्रम है कि मिथ्या वादों, कुप्रथाओं, अंधविश्वासों और पाखंड से सना पौराणिक जगत विश्व के छोटे से छोटे संप्रदाय के लिए खतरा हो सकता है।**

पौराणिक जगत के लोग या आम हिंदू जो तर्क अन्य मतों के खंडन में देते हैं उन्हें न्याय बुद्धि से पौराणिक मान्यताओं पर घटाकर देखेंगे, तो पाएंगे कि हम स्वयं मिथ्या वादों से सने बैठे हैं, सुव्यवस्था, सत्य और न्याय की तो नींव ही नहीं है। तो वे तर्क आए कहॉ से? जिससे परंपरा से वे तर्क वर्तमान में हिंदू समाज को नख दंत के रूप में मिले हैं, वे भारत की आर्ष परंपरा से आए हैं जिसे हम छिन्न–भिन्न कर चुके हैं–जन्मना वर्ण और जाति व्यवस्था के जहर से! और इसका सर्वाधिक दुष्प्रभाव झेलना पड़ता है जन्मना शूद्र या दलित घोषित किए गए वर्ग को अस्पृश्यता, छुआछूत, भेदभाव, वंचना और जन्मना उच्चवर्गों द्वारा उत्पीड़न के रूप में। दुर्भाग्य यह है कि शिक्षा और वेदज्ञान इस दुर्दशा को दूर कर सकता है– यह जानकर जन्मना ब्राह्मण वर्ग ने स्त्री और शूद्रों को शिक्षा और वेदज्ञान से भी वंचित कर दिया और इन्हें जन्मना ब्राह्मण वर्ग तक सीमित कर दिया।

जो जाति कभी विश्व का मार्गदर्शन करती थी, जन्मना वर्ण व्यवस्था के कारण उसकी दुर्दशा को देखकर और उसमें भी शुद्र वर्ग की दुर्दशा को देखकर किसी के भी द्वारा उनके वास्तविक हित का मार्ग ना खोल कर धर्म और आरक्षण रूपी नशों या उत्थान के बंद द्वारोंको खोले बिना न हिन्दू समाज की मुक्ति है, न भारत की और न ही विश्व की! **सीधे शब्दों में कहें तो शूद्रों का उद्धार सम्पूर्ण दुर्वव्यवस्था के उच्छेद का मार्ग खोलने वाली कुञ्जी है।**

पीड़ित जगत् के उद्धार की, स्त्री और शूद्रों के लिए ही नहीं, मानवमात्र के लिए शिक्षा और वेदज्ञान के द्वार खोलनेवली सुनहरे पारस से बनी कुञ्जी (ताली) हाथ में लिए एक महापुरुष आया।

उस ताली को देखकर अपात्र होकर भी सुख भोगने वाले घबराए। अव्यवस्था के ताले खुलने से उन्हें सुख के लिए श्रम और तप करना पड़ेगा– इस विचार मात्र से वे घबराए, क्रोधित हुए । पाप के हथियार अपनाते हुए पहले उपेक्षा की, पश्चात् निन्दा करने लगे, वश नहीं चलने पर **उस दिव्य कुञ्जीधारी की हत्या कर दी।** किन्तु वह कुञ्जी तो सामने है। समस्या यह है कि विरोधी भी उस कुञ्जी रूपी पारस को ग्रहण कर ले तो सुव्यवस्था का समर्थक बन जाए। वही कुञ्जी प्रस्तुत है:

अपने अमर ग्रंथ में यह दिव्य पुरुष लिखता है–"आचार्य्य अपने शिष्य को उपदेश करे और विशेषकर राजा इतर क्षत्रिय, वैश्य और उत्तम शूद्र जनों को भी विद्या का अभ्यास अवश्य करावें" आगे लिखता है–**"सामान्यं विशेष इति बुद्धयपेक्षम्।।** –वै० अ० १। आ० २। सू० ३।। सामान्य और विशेष बुद्धि की अपेक्षा से सिद्ध होते हैं। जैसे–मनुष्य व्यक्तियों में मनुष्यत्व सामान्य और पशुत्वादिं से विशेष तथा स्त्रीत्व और पुरुषत्व इनमें ब्राह्मणत्व क्षत्रियत्व वैश्यत्व शूद्रत्व भी विशेष हैं। ब्राह्मण व्यक्तियों में ब्राह्मणत्व सामान्य और क्षत्रियादि से विशेष है इसी प्रकार सर्वत्र जानो।"

ईश्वरीय वाणी स्वयं वेद को उद्धृत करें वह महापुरुष आगे लिखता है–"यथेमां वाचं

कल्याणीमावदानि जनेभ्यः। ब्रह्मराजन्याभ्या शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय ।।

परमेश्वर कहता है कि (यथा) जैसे मैं (जनेभ्यः) सब मनुष्यों के लिये (इमाम्) इस (कल्याणीम्) कल्याण अर्थात् संसार और मुक्ति के सुख देनेहारी (वाचम्) ऋग्वेदादि चारों वेदों की वाणी का (आ वदानि) उपदेश करता हूं वैसे तुम भी किया करो।

यहाँ कोई ऐसा प्रश्न करे कि जन शब्द से द्विजों का ग्रहण करना चाहिये क्योंकि स्मृत्यादि ग्रन्थों में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य ही के वेदों के पढ़ने का अधिकार लिखा है; स्त्री और शूद्रादि वर्णों का नहीं।

(उत्तर) (ब्रह्मराजन्याभ्यां) इत्यादि देखो! परमेश्वर स्वयं कहता है कि हम ने ब्राह्मण, क्षत्रिय, (अर्य्याय) वैश्य, (शूद्राय) शूद्र, और (स्वाय) अपने भृत्य वा स्त्र्यादि (अरणाय) और अतिशूद्रादि के लिये भी वेदों का प्रकाश किया है; अर्थात् सब मनुष्य वेदों को पढ़ पढ़ा और सुन सुनाकर विज्ञान को बढ़ा के अच्छी बातों का ग्रहण और बुरी बातों का त्याग करके दुःखों से छूट कर आनन्द को प्राप्त हों। कहिये! अब तुम्हारी बात मानें वा परमेश्वर की? परमेश्वर की बात अवश्य माननीय है इतने पर भी जो कोई इस को न मानेगा वह नास्तिक कहावेगा क्योंकि 'नास्तिको वेदनिन्दकः' वेदों का निन्दक और न मानने वाला नास्तिक कहाता है। क्या परमेश्वर शूद्रों का भला करना नहीं चाहता? क्या ईश्वर पक्षपाती है कि वेदों के पढ़ने सुनने का शूद्रों के लिये निषेध और द्विजों के लिये विधि करे? जो परमेश्वर का अभिप्राय शूद्रादि के पढ़ाने सुनाने का न होता तो इनके शरीर में वाक् और श्रोत्र इन्द्रिय क्यों रचता? जैसे परमात्मा ने पृथिवी, जल, अग्नि, वायु, चन्द्र, सूर्य और अन्नादि पदार्थ सब के लिये बनाये हैं वैसे ही वेद भी सबके लिये प्रकाशित किये हैं। और जहाँ–जहाँ निषेध किया है उस का यह अभिप्राय है कि जिस को पढ़ने पढ़ाने से कुछ भी न आवे वह निर्बुद्धि और मूर्ख होने से शूद्र कहाता है। उस का पढ़ना पढ़ाना व्यर्थ है।"

टागे शंकाओं का समाधान प्रश्नोत्तर के रूप में करते हुए लिखते हैं:

"(प्रश्न) क्या जिस के माता पिता ब्राह्मण हों वह ब्राह्मणी ब्राह्मण होता है और जिसके माता पिता अन्य वर्णस्थ हों उन का सन्तान कभी ब्राह्मण हो सकता है?

(उत्तर) हां बहुत से हो गये, होते हैं और होंगे भी। जैसे छान्दोग्य उपनिषद् में जाबाल ऋषि अज्ञातकुल, महाभारत में विश्वामित्र क्षत्रिय वर्ण और मातंग ऋषि चाण्डाल कुल से ब्राह्मण हो गये थे। अब भी जो उत्तम विद्या स्वभाव वाला है वही ब्राह्मण के योग्य और मूर्ख शूद्र के योग्य होता है और वैसा ही आगे भी होगा।.....

(प्रश्न) .(**ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः तः। ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्या शूद्रो अजायत।**.....सं0)...यजुर्वेद के ३१वें अध्याय का ११वां मन्त्र है। इसका यह अर्थ है कि ब्राह्मण ईश्वर के मुख, क्षत्रिय बाहू, वैश्य ऊरू और शूद्र पगों से उत्पन्न हुआ है। इसलिये जैसे मुख न बाहू आदि और बाहू आदि न मुख होते हैं, इसी प्रकार ब्राह्मण न क्षत्रियादि और क्षत्रियादि न ब्राह्मण हो सकते हैं।

(उत्तर) इस मन्त्र का अर्थ जो तुम ने किया वह ठीक नहीं क्योंकि यहां पुरुष अर्थात् निराकार व्यापक परमात्मा की अनुवृत्ति है। जब वह निराकार है तो उसके मुखादि अंग नहीं हो सकते, जो मुखादि अंग वाला हो वह पुरुष अर्थात् व्यापक नहीं और जो व्यापक नहीं वह सर्वशक्तिमान् जगत् का स्रष्टा, धर्त्ता, प्रलयकर्त्ता जीवों के पुण्य पापों की व्यवस्था करने हारा, सर्वज्ञ, अजन्मा, मृत्युरहित आदि विशेषणवाला नहीं हो सकता।

इसलिये इस का यह अर्थ है कि जो (अस्य) पूर्ण व्यापक परमात्मा की सृष्टि में मुख के सदृश सब में मुख्य उत्तम हो वह (ब्राह्मणः) ब्राह्मण (बाहू) 'बाहुर्वै बलं बाहुर्वै वीर्यम्' शतपथब्राह्मण। बल वीर्य्य का नाम बाहु है वह जिस में अधिक हो सो (राजन्यः) क्षत्रिय (ऊरू) कटि के अधो और जानु के उपरिस्थ भाग का नाम है जो सब पदार्थों और सब देशों में ऊरू के बल से जावे आवे प्रवेश करे वह (वैश्यः) वैश्य और (पद्भ्याम्) जो पग के अर्थात् नीच अंग के सश मूर्खत्वादि गुणवाला हो वह शूद्र है।

जिन महर्षि मनु को शूद्रविरोधी प्रचारित और घोषित कर दिया है, उन्हीं की वाणी में वर्णव्यवस्था गुणकर्माधारित ही होनी चाहिए, इसे स्थापित करते महर्षि आगे लिखते हैं:

शूद्रो ब्राह्मणतामेति ब्राह्मणश्चौति शूद्रताम्। क्षत्रियाज्जातमेवन्तु विद्याद्वैश्यात्तथैव च।। मनु०।। जो शूद्रकुल में उत्पन्न होके ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य के समान गुण, कर्म, स्वभाव वाला हो तो वह शूद्र ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य हो जाय, वैसे ही ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्यकुल में उत्पन्न हुआ हो और उस के गुण, कर्म, स्वभाव शूद्र के सदृश हों तो वह शूद्र हो जाय। वैसे क्षत्रिय, वैश्य के कुल में उत्पन्न होके ब्राह्मण वा शूद्र के समान होने से ब्राह्मण और शूद्र भी हो जाता है। अर्थात् चारों वर्णों में जिस–जिस वर्ण के सदृश जो–जो पुरुष वा स्त्री हो वह–वह उसी वर्ण में गिनी जावे।

जन्मना वर्णव्यवस्था और जन्मना जातिवाद को अन्याय, पक्षपात और अधर्म घोषित करते ये महापुरुष लिखते हैं:

जो दुष्ट कर्मकारी द्विज को श्रेष्ठ और श्रेष्ठ कर्मकारी शूद्र को नीच मानैं तो इस से परे पक्षपात, अन्याय, अधर्म दूसरा अधिक क्या होगा?

धर्म का लोप करके वेदविरुद्ध व्यवस्था लागू करने वालों को एक परिभाषा से शूद्र घोषित करते वे लिखते हैं: "जो सब ऐश्वर्यों के देने और सुखों की वर्षा करने वाला धर्म है उस का लोप करता है उसी को विद्वान् लोग वृषल अर्थात् शूद्र और नीच जानते हैं। इसलिये किसी मनुष्य को धर्म का लोप करना उचित नहीं।।"

जन्मना जातिवाद जनित छुआछूत को प्रश्नोत्तररूप में अधर्म बताते वे लिखते हैं:

"(प्रश्न) द्विज अपने हाथ से रसोई बना के खावें वा शूद्र के हाथ की बनाई खावें?

(उत्तर) शूद्र के हाथ की बनाई खावें क्योंकि ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य वर्णस्थ स्त्री पुरुष विद्या पढ़ाने, राज्यपालने और पशुपालन खेती और व्यापार के काम में तत्पर रहें और शूद्र के पात्र में तथा उस के घर का पका हुआ अन्न आपत्काल के विना न खावें। सुनो

प्रमाण–आर्याधिष्ठिता वा शूद्राः संस्कर्त्तारः स्युः। –यह आपस्तम्ब का सूत्र है। आर्यों के घर में शूद्र अर्थात् मूर्ख स्त्री पुरुष पाकादि सेवा करें परन्तु वे शरीर वस्त्र आदि से पवित्र रहैं। आर्यों के घर में जब रसोई बनावें तब मुख बांध के बनावें, क्योंकि उनके मुख से उच्छिष्ट और निकला हुआ श्वास भी अन्न में न पड़े। आठवें दिन क्षौर, नखच्छेदन करावें। स्नान करके पाक बनाया करें। आर्यों को खिला के आप खावें।

(प्रश्न) शूद्र के छुए हुए पके अन्न के खाने में जब दोष लगाते हैं तो उस के हाथ का बनाया कैसे खा सकते हैं?

(उत्तर) यह बात कपोलकल्पित झूठी है। क्योंकि जिन्होंने गुड़, चीनी, घृत, दूध, पिशान, शाक, फल, मूल खाया उन्होंने जानो सब जगत् भर के हाथ का बनाया और उच्छिष्ट खा लिया। क्योंकि जब शूद्र, चमार, भंगी, मुसलमान, ईसाई आदि लोग खेतों में से ईख को काटते, छीलते, पीलकर रस निकालते हैं तब मलमूत्रेत्सर्ग करके उन्हीं विना धोये हाथों से छूते, उठाते, धरते आधा सांठा चूँस रस पीके आधा उसी में डाल देते और रस पकाते समय उस रस में रोटी भी पकाकर खाते हैं। जब चीनी बनाते हैं तब पुराने जूते कि जिस के तले में विष्ठा, मूत्र, गोबर, धूली लगी रहती है उन्हीं जूतों से उस को रगड़ते हैं। दूध में अपने घर के उच्छिष्ट पात्रें का जल डालते उसी में घृतादि रखते और आटा पीसते समय भी वैसे ही उच्छिष्ट हाथों से उठाते और पसीना भी आटे में टपकता जाता है इत्यादि और फल मूल कन्द में भी ऐसी ही लीला होती है। जब इन पदार्थों को खाया तो जानो सब के हाथ का खा लिया।

जन्मना जातिवाद के पोशक जन्मना ब्राह्मणों द्वारा स्त्री शूद्रों या कि ब्राह्मणेतरों को शिक्षा और वेदज्ञान से वंचित करने और स्वयं उनके भी विद्या में प्रमाद करने से बने अनार्ष ग्रन्थों का रचन और चलन हुआ। इनके विषय में ये महापुरुष आगे लिखते हैं:

"(प्रश्न) जब वेद पढ़ने का सामर्थ्य नहीं रहा तब स्मृति, जब स्मृति के पढ़ने की बुद्धि नहीं रही तब शास्त्र, जब शास्त्र पढ़ने का सामर्थ्य न रहा तब पुराण बनाये, केवल स्त्री और शूद्रों के लिये। क्योंकि इन को वेद पढ़ने सुनने का अधिकार नहीं है।

(उत्तर) यह बात मिथ्या है। क्योंकि सामर्थ्य पढ़ने–पढ़ाने ही से होता है और वेद पढ़ने सुनने का अधिकार सब को है। देखो! गार्गी आदि स्त्रियां और छान्दोग्य में जानश्रुति शूद्र ने भी वेद 'रैक्यमुनि' के पास पढ़ा था और यजुर्वेद के २६वें अध्याय के दूसरे मन्त्र में स्पष्ट लिखा है कि वेदों के पढ़ने और सुनने का अधिकार मनुष्यमात्र को है। पुनः जो ऐसे–ऐसे मिथ्या ग्रन्थ बना लोगों को सत्यग्रन्थों से विमुख कर जाल में फंसा अपने प्रयोजन को साधते हैं वे महापापी क्यों नहीं? देखो! ग्रहों का चक्र कैसा चलाया है कि जिस ने विद्याहीन मनुष्यों को ग्रस लिया है।"

ब्रह्मचर्य तीन प्रकार का होता है कनिष्ठ–जो पुरुष अन्नरसमय देह और पुरि अर्थात् देह में शयन करने वाला जीवात्मा, यज्ञ अर्थात् अतीव शुभगुणों से संगत और सत्कर्त्तव्य है इस को अवश्य है कि २४ वर्ष पर्यन्त जितेन्द्रिय अर्थात् ब्रह्मचारी रह कर वेदादि विद्या और

सुशिक्षा का ग्रहण करे और विवाह करके भी लम्पटता न करें तो उसके शरीर में प्राण बलवान् होकर सब शुभगुणों के वास कराने वाले होते हैं।।१।। इस प्रथम वय में जो उस को विद्याभ्यास में सन्तप्त करे और वह आचार्य वैसा ही उपदेश किया करे और ब्रह्मचारी ऐसा निश्चय रक्खे कि जो मैं प्रथम अवस्था में ठीक–ठीक ब्रह्मचर्य से रहूँगा तो मेरा शरीर और आत्मा आरोग्य बलवान् हो के शुभगुणों को बसाने वाले मेरे प्राण होंगे। हे मनुष्यो तुम इस प्रकार से सुखों का विस्तार करो, जो मैं ब्रह्मचर्य का लोप न करू।। २४ वर्ष के पश्चात् गृहाश्रम करूंगा तो प्रसिद्ध है कि रोगरहित रहूँगा और आयु भी मेरी ७० वा ८० वर्ष होगी।।२।।

मध्यम ब्रह्मचर्य–यह है जो मनुष्य ४४ वर्ष पर्यन्त ब्रह्मचारी रह कर वेदाभ्यास करता है उसके प्राण, इन्द्रियाँ, अन्तःकरण और आत्मा बलयुक्त होके सब दुष्टों को रुलाने और श्रेष्ठों का पालन करनेहारे होते हैं।।३।। जो मैं इसी प्रथम वय में जैसा आप कहते हैं कुछ तपश्चर्या करूं तो मेरे ये रुद्ररूप प्राणयुक्त यह मध्यम ब्रह्मचर्य सिद्ध होगा। हे ब्रह्मचारी लोगो! तुम इस ब्रह्मचर्य को बढ़ाओ। जैसे मैं इस ब्रह्मचर्य का लोप न करके यज्ञस्वरूप होता हूँ और उसी आचार्यकुल से आता और रोगरहित होता हूँ जैसा कि यह ब्रह्मचारी अच्छा काम करता है वैसा तुम किया करो।।४।।

उत्तम ब्रह्मचर्य–जव वर्ष पर्यन्त का तीसरे प्रकार का होता है। जैसे ४८ अक्षर की जगती वैसे जो ४८ वर्ष पर्यन्त यथावत् ब्रह्मचर्य करता है उसके प्राण अनुकूल होकर सकल विद्याओं का ग्रहण करते हैं।।५।। आचार्य और माता पिता अपने सन्तानों को प्रथम वय में विद्या और गुणग्रहण के लिये तपस्वी कर और उसी का उपदेश करें और वे सन्तान आप ही आप अखण्डित ब्रह्मचर्य सेवन से तीसरे उत्तम ब्रह्मचर्य का सेवन करके पूर्ण अर्थात् चार सौ वर्ष पर्यन्त आयु को बढ़ावें वैसे तुम भी बढ़ाओ। क्योंकि जो मनुष्य इस ब्रह्मचर्य को प्राप्त होकर लोप नहीं करते वे सब प्रकार के रोगों से रहित होकर धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को प्राप्त होते हैं।।६।।

किसी भी वर्ण में जन्म लेने पर भी गुणकर्मानुसार वर्णनिर्धारण की आर्ष परंपरा को उद्धृत करते ये महापुरुष आगे लिखते हैं:

"(प्रश्न) क्या जिस के माता पिता ब्राह्मण हों वह ब्राह्मणी ब्राह्मण होता है और जिसके माता पिता अन्य वर्णस्थ हों उन का सन्तान कभी ब्राह्मण हो सकता है?

(उत्तर) हॉ बहुत से हो गये, होते हैं और होंगे भी। जैसे छान्दोग्य उपनिषद् में जाबाल ऋषि अज्ञातकुल, महाभारत में विश्वामित्र क्षत्रिय वर्ण और मातंग ऋषि चाण्डाल कुल से ब्राह्मण हो गये थे। अब भी जो उत्तम विद्या स्वभाव वाला है वही ब्राह्मण के योग्य और मूर्ख शूद्र के योग्य होता है और वैसा ही आगे भी होगा।

(प्रश्न) भला जो रज वीर्य से शरीर हुआ है वह बदल कर दूसरे वर्ण के योग्य कैसे हो सकता है।

(उत्तर) रज वीर्य्य के योग से ब्राह्मण शरीर नहीं होता किन्तु–स्वाध्यायेन

जपैर्होमैस्त्रैविद्येनेज्यया सुतैः। महायज्ञैश्च यज्ञैश्च ब्राह्मीयं क्रियते तनुः।। मनु०।।

इस का अर्थ पूर्व कर आये हैं अब यहां भी संक्षेप से करते हैं। (स्वाध्यायेन) पढ़ने पढ़ाने (जपैः) विचार करने कराने नानाविध होम के अनुष्ठान, सम्पूर्ण वेदों को शब्द, अर्थ, सम्बन्ध, स्वरोच्चारणसहित पढ़ने पढ़ाने (इज्यया) पौर्णमासी, इष्टि आदि के करने, पूर्वोक्त विधिपूर्वक (सुतैः) धर्म से सन्तानोत्पत्ति (महायज्ञैश्च) पूर्वोक्त ब्रह्मयज्ञ, देवयज्ञ, पितृयज्ञ, वैश्वदेवयज्ञ और अतिथियज्ञ, (यज्ञैश्च) अग्निष्टोमादि– यज्ञ, विद्वानों का संग, सत्कार, सत्यभाषण, परोपकारादि सत्कर्म और सम्पूर्ण शिल्पविद्यादि पढ़ के दुष्टाचार छोड़ श्रेष्ठाचार में वर्त्तने से (इयम्) यह (तनुः) शरीर (ब्राह्मी) ब्राह्मण का (क्रियते) किया जाता है। क्या इस श्लोक को तुम नहीं मानते?

फिर क्यों रज वीर्य के योग से वर्णव्यवस्था मानते हो?

मैं अकेला नहीं मानता किन्तु बहुत से लोग परम्परा से ऐसा ही मानते हैं।

(प्रश्न) क्या तुम परम्परा का भी खण्डन करोगे?

(उत्तर) नहीं, परन्तु तुम्हारी उलटी समझ को नहीं मान के खण्डन भी करते हैं।

(प्रश्न) हमारी उलटी और तुम्हारी सूधी समझ है इस में क्या प्रमाण?

(उत्तर) यही प्रमाण है कि जो तुम पांच सात पीढ़ियों के वर्त्तमान को सनातन व्यवहार मानते हो और हम वेद तथा सृष्टि के आरम्भ से आजपर्यन्त की परम्परा मानते हैं। देखो! जिस का पिता श्रेष्ठ उस का पुत्र दुष्ट और जिस का पुत्र श्रेष्ठ उस का पिता दुष्ट तथा कहीं दोनों श्रेष्ठ वा दुष्ट देखने में आते हैं इसलिये तुम लोग भ्रम में पड़े हो।

(प्रश्न) क्या स्त्री और शूद्र भी वेद पढ़ें? जो ये पढ़ेंगे तो हम फिर क्या करेंगे? और इनके पढ़ने में प्रमाण भी नहीं हैं। जैसा यह निषेध है–

स्त्रीशूद्रौ नाधीयातामिति श्रुतेः।

स्त्री और शूद्र न पढ़ें यह श्रुति है।

(उत्तर) सब स्त्री और पुरुष अर्थात् मनुष्यमात्र को पढ़ने का अधिकार है। तुम कुआ में पड़ो और यह श्रुति तुम्हारी कपोलकल्पना से हुई है। किसी प्रामाणिक ग्रन्थ की नहीं। और सब मनुष्यों के वेदादि शास्त्र पढ़ने सुनने के अधिकार का प्रमाण यजुर्वेद के छब्बीसवें अध्याय में दूसरा मन्त्र है–यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः। ब्रह्मराजन्याभ्या शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय।।

परमेश्वर कहता है कि (यथा) जैसे मैं (जनेभ्यः) सब मनुष्यों के लिये (इमाम्) इस (कल्याणीम्) कल्याण अर्थात् संसार और मुक्ति के सुख देनेहारी (वाचम्) ऋग्वेदादि चारों वेदों की वाणी का (आ वदानि) उपदेश करता हूं वैसे तुम भी किया करो।

आगे बहुत बड़ी शंका का निवारण प्रश्नोत्तर रूप में पुनः करते हुए वे लिखते हैं:

"यहाँ कोई ऐसा प्रश्न करे कि जन शब्द से द्विजों का ग्रहण करना चाहिये क्योंकि स्मृत्यादि ग्रन्थों में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य ही के वेदों के पढ़ने का अधिकार लिखा है; स्त्री और शूद्रादि

वर्णों का नहीं।

(उत्तर) (ब्रह्मराजन्याभ्या) इत्यादि देखो परमेश्वर स्वयं कहता है कि हम ने ब्राह्मण, क्षत्रिय, (अर्य्याय) वैश्य, (शूद्राय) शूद्र, और (स्वाय) अपने भृत्य वा स्त्रियादि (अरणाय) और अतिशूद्रादि के लिये भी वेदों का प्रकाश किया है; अर्थात् तब मनुष्य वेदों को पढ़ पढ़ा और सुन सुनाकर विज्ञान को बढ़ा के अच्छी बातों का ग्रहण और बुरी बातों का त्याग करके दुःखों से छूट कर आनन्द को प्राप्त हों।

कहिये! अब तुम्हारी बात मानें वा परमेश्वर की?

परमेश्वर की बात अवश्य माननीय है इतने पर भी जो कोई इस को न मानेगा वह नास्तिक कहावेगा क्योंकि 'नास्तिको वेदनिन्दकः' वेदों का निन्दक और न मानने वाला नास्तिक कहाता है। क्या परमेश्वर शूद्रों का भला करना नहीं चाहता? क्या ईश्वर पक्षपाती है कि वेदों के पढ़ने सुनने का शूद्रों के लिये निषेध और द्विजों के लिये विधि करे? जो परमेश्वर का अभिप्राय शूद्रादि के पढ़ाने सुनाने का न होता तो इनके शरीर में वाक् और श्रोत्र इन्द्रिय क्यों रचता?जैसे परमात्मा ने पृथिवी, जल, अग्नि, वायु, चन्द्र, सूर्य और अन्नादि पदार्थ सब के लिये बनाये हैं वैसे ही वेद भी सबके लिये प्रकाशित किये हैं। और जहाँ–जहाँ निषेध किया है उस का यह अभिप्राय है कि जिस को पढ़ने पढ़ाने से कुछ भी न आवे वह निर्बुद्धि और मूर्ख होने से शूद्र कहाता है। उस का पढ़ना पढ़ाना व्यर्थ है। और जो स्त्रियों के पढ़ने का निषेध करते हो वह तुम्हारी मूर्खता, स्वार्थता और निर्बुद्धिता का प्रभाव है। देखो! वेद में कन्याओं के पढ़ने का प्रमाण–

ब्रह्मचर्य्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम् ।।–अथर्व० अ० ३। प्र० २४। कां० ११। मं० १८।।

जैसे लड़के ब्रह्मचर्य सेवन से पूर्ण विद्या और सुशिक्षा को प्राप्त होके युवती, विदुषी, अपने अनुकूल प्रिय सदृश स्त्रियों के साथ विवाह करते हैं वैसे (कन्या) कुमारी (ब्रह्मचर्येण) ब्रह्मचर्य सेवन से वेदादि शास्त्रें को पढ़ पूर्ण विद्या और उत्तम शिक्षा को प्राप्त युवती होके पूर्ण युवावस्था में अपने सदृश प्रिय विद्वान् (युवानम्) और पूर्ण युवावस्थायुक्त पुरुष को (विन्दते) प्राप्त होवे। इसलिये स्त्रियों को भी ब्रह्मचर्य और विद्या का ग्रहण अवश्य करना चाहिये।

(प्रश्न) क्या स्त्री लोग भी वेदों को पढ़ें?

(उत्तर) अवश्य;देखो श्रौतसूत्रदि में–इमं मन्त्रं पत्नी पठेत्।

अर्थात् स्त्री यज्ञ में इस मन्त्र को पढ़े। जो वेदादि शास्त्रों को न पढ़ी होवे तो यज्ञ में स्वरसहित मन्त्रें का उच्चारण और संस्कृत भाषण कैसे कर सके? भारतवर्ष की स्त्रियों में भूषणरूप गार्गी आदि वेदादि शास्त्रें को पढ़ पूर्ण विदुषी हुई थीं यह शतपथब्राह्मण में स्पष्ट लिखा है। भला जो पुरुष विद्वान् और स्त्री अविदुषी और स्त्री विदुषी और पुरुष अविद्वान् हो तो नित्यप्रति देवासुर–संग्राम घर में मचा रहै फिर सुख कहां? इसलिये जो स्त्री न पढ़े तो कन्याओं की पाठशाला में अध्यापिका क्योंकर हो सकें तथा राजकार्य्य न्यायाधीशत्वादि; गृहाश्रम का कार्य्; जो पति को स्त्री और स्त्री को पति प्रसन्न रखना; घर के सब काम स्त्री के

आधीन रहना विना विद्या के इत्यादि काम अच्छे प्रकार कभी ठीक नहीं हो सकते। देखो! आर्य्यावर्त्त के राजपुरुषों की स्त्रियां धनुर्वेद अर्थात् युद्धविद्या भी अच्छी प्रकार जानती थीं क्योंकि जो न जानती होतीं तो कैकेयी आदि दशरथ आदि के साथ युद्ध में क्योंकर जा सकती? और युद्ध कर सकती। इसलिये ब्राह्मणी को सब विद्या, क्षत्रिया को सब विद्या और युद्ध तथा राजविद्याविशेष, वैश्या को व्यवहारविद्या और शूद्रा को पाकादि सेवा की विद्या अवश्य पढ़नी चाहिये। जैसे पुरुषों को व्याकरण, धर्म और अपने व्यवहार की विद्या न्यून से न्यून अवश्य पढ़नी चाहिये। वैसे स्त्रियों को भी व्याकरण, धर्म, वैद्यक,गणित, शिल्पविद्या तो अवश्य ही सीखनी चाहिये। क्योंकि इनके सीखे विना सत्याऽसत्य का निर्णय; पति आदि से अनुकूल वर्त्तमान, यथायोग्य सन्तानोत्पत्ति, उनका पालन, वर्द्धन और सुशिक्षा करना, घर के सब कार्य्यों को जैसा चाहिये वैसा करना कराना वैद्यकविद्या से औषधवत् अन्न पान बना और बनवाना नहीं कर सकती। जिससे घर में रोग कभी न आवे और सब लोग सदा आनन्दित रहैं। शिल्पविद्या के जाने विना घर का बनवाना, वस्त्र आभूषण आदि का बनाना बनवाना, गणितविद्या के विना सब का हिसाब समझना समझाना, वेदादि शास्त्रविद्या के विना ईश्वर और धर्म को न जानके अधर्म से कभी नहीं बच सके। इसलिये वे ही धन्यवादार्ह और कृतकृतत्य हैं कि जो अपने सन्तानों को ब्रह्मचर्य, उत्तम शिक्षा और विद्या से शरीर और आत्मा के पूर्ण बल को बढ़ावें। जिस से वे सन्तान मातृ, पितृ, पति, सासु, श्वसुर, राजा, प्रजा, पड़ोसी, इष्टमित्र और सन्तानादि से यथायोग्य धर्म से वर्तें। यही कोश अक्षय है। इस को जितना व्यय करे उतना ही बढ़ता जाय। अन्य सब कोष व्यय करने से घट जाते हैं और दायभागी भी निज भाग लेते हैं। और विद्याकोष का चोर वा दायभागी कोई भी नहीं हो सकता। इस कोष की रक्षा और वृद्धि करने वाला विशेष राजा और प्रजा भी हैं।"

सामाजिक व्यवस्था में प्राप्त उच्च वर्णों और शासकीय विशेष सुविधा के नाम पर आरक्षण प्राप्त शूद्र वर्ण भले ही क्षुद्र और तात्कालिक सुखों के कारण जन्मना जातिववाद को ही धर्म और नियति मान लें। किन्तु यथार्थ में यह न किसी वर्ण या जाति की मुक्ति है, न समाज की और न ही देश की। इस व्यवस्था से हानि हर व्यक्ति की, समाज की, वर्ण की, धर्म की और राष्ट्र के साथ साथ सम्पूर्ण विश्व की है। धर्मान्तरण सब वर्णों का हुआ है, देश सबका टूटा है। दीवारें खींचकर, बिखरकर कोई भी सुरक्षित नहीं है। तत्पश्चात् भी तात्कालिक सुख और अज्ञान की मदिरा में डूबी मानवता को उबारने या कि शूद्रों के सुख का और सच्चा, स्थायी और मूल बताने वाला अतिदूरदर्शी, सर्वहितचिन्तक, आप्त महापुरुष है मेरा एकस्मिन्नेव सर्वे–**महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती!** और जिस सर्वकल्याणकारी पारस रूपी कुञ्जी की एक झलकमात्र दिखाई गई है वह दिखलाई है उनके **अमरग्रंथ सत्यार्थप्रकाश से।**

ऋषिगाथा

सत्यरथ पर सवार

(गतांक में आपने ऋषि की विजयगाथा की निरंतरता, पाखण्डियों की पराजय, ठाकुर देवेन्द्रनाथ से भेंट, सज्जनों को कृतकृत्य करने, दुर्जनों को सन्मार्ग दिखाने की गाथा पढ़ी । इस अंक में भी विशेषकर सोरों में ऋषि द्वारा शाला स्थापना के उल्लेख के साथ विजयगाथा जारी है...सं.)

मणियों को अज्ञान जानकर, कांच लुटाया करता ।
मर्कट पुष्पों को लेकर, भू:पर बिखराया करता ।।५६।।
पर प्रिय मालाकार जान, नरपति का भाल सजाता ।
मणि पाकर मणिहार, गले का सुन्दर हार बनाता ।।५७।।
बिरले ही मानव इच्छाओं, का अंकन कर पाते ।
मूर्ख मनुज कंटक पथ को, आकर्षक सुखद बताते ।।५८।।
था ओझा मिर्जापुर में, मनमाना वचन प्रसारा ।
मेरे कृत्यों से जाये ऋषि, बीस दिनों में मारा ।।५९
जहाँ पुष्प मुस्काते, कांटे भी रहते डाली पर ।
मेघों के गुंजन में चपला, हँसती हृदय रुलाकर ।।६०।।
जहाँ वीर होते कायर की, कायरता भी होती ।
एक डाल पर कोयल हंसती, मौन चकौर रोती ।।६१।।
कल कल करती धारा में, जल ग्राह कभी मिल जाते ।
जहाँ सु:ख का श्रोत मृत्यु के भीषण घन घिर जाते ।।६२।।
एक मूर्ख प्रतिमा प्रेमी, ओझा प्रभाव में आकर ।
किया मृत्यु का पुरश्चरण, प्रिय देवी देव मनाकर ।।६३।।
पर विधि की लीला का, जन साधारण पार न पाते ।
उसके इंगित से पाषाणों पर, पंकज खिलजाते ।।६४।।
वही अज्ञ तीसरे दिवस, दुसाध्य रोग ने घेरा ।
राम राम है सत्य राम कह, नर ले जाते डेरा ।।६५।।

सत्पथ पर कंकट बिखराना, निज तन छिदवाना है ।
साधु जनों का प्राण हरण,ज्वाला को सहलाना है ।।६६।।
स्वामी विचरण करते, करते, काशी नगरी आये ।
उद्घोषित कर शास्त्र विषय को, अमृतगान सुनाये ।।६७।।
कर खंडन अद्वैत्वाद का, प्रभु अर्चना सिखाते ।
एक पुस्तिका लिख शुभ, सत्य ज्ञान का बोध कराते ।।६८।।
बीत गये दो मास सांस से, ऋषिवर सोरों आये।
तज सोरों भी कासगंज, श्री स्वामी चरण सुहाये ।।६९।।
बग्घी में ऋषिवर विराजे, थे जय जय के गायन ।
स्वागत कर स्वामी का हर्षाता, था जनता का मन ।।७०।।
कहीं हलाहल कहीं सुधा ने, शुभ अंचल फैलाया ।
कहीं वाक्य शर कहीं विजय ने, जय-जय का स्वर गाया ।।७१।।
योगिराज ने किया यहाँ पर, शाला का संस्थापन ।
कितने बने विपक्षी कुछ थे, भक्त हृदय प्रिय सज्जन ।।७२।।
प्रात: उठे ऋषिवर ध्यानावस्थित तन्मय हो जाते ।
उठते समाधि से लोचनद्वय, अंगारे बरपाते ।।७३।।
कुछ क्षण रक्त लोचनों पर, करते रहते जल सिंचन ।
कितने भक्त समीप बैठ, करते शंकर आराधन ।।७४।।
पुन: स्वामिवर कर भोजन, विश्राम किया करते थे ।
भक्तों की शंका परिखा, परिपूर्ण किया करते थे ।।७५।।
जनता जग अध प्रतिदिन: साधक देते युग को सत्पथ ।
इसी साम्य के राज मार्ग पर, चलता जन जीवन रथ ।।७६।।
चले आ रहे स्वामि काल, अराह्न ओर जंगल की ।
चर्चा सुनते छात्र जनों, भक्तों, के अन्तस्थल की ।।७७।।
ऊपर नभ नीलिमा नीलधारा, सी बहती जाती ।
पश्चिम द्वार अरुण पट ओढ़े रवि बल्लभा लुभाती ।।७८।।
मूक विहंगम चाह मिलन की, लेकर उड़ते जाते ।
पगडंडी पर कृषक वृषभ, लेकर आते मुस्कराते ।।७९।।

पनघट पर घट धर कर, इठलाते बालाओं के दल ।
पूर्ण प्रकृति उन्मत्त आकुलित, हुए भ्रमर कुल केवल ।।८०।।

कविताकर की सरस कल्पना, सन्ध्या नृत्य दिखाती ।
ज्ञात किसे तरु मौन साधना, किसका ध्यान लगाती ।।८१।।

सभी अचर चर जीव लगे, निज प्रिय के आराधन में ।
किन्तु स्वामि का मन था, भूलों, दीनों के दर्शन में ।।८२।।

देखा सन्मुख पथ पर दो, उन्मत्त सांड लड़ते हैं ।
ये पशु होकर भी कब निज, अधिकार हार सकते हैं ।।८३।।

टक्कर पर टक्कर लम्बी, लांल उठा रक्खी थी ।
प्रण पूरा करने प्राणों की, होड़ लगा रक्खी थी ।।८४।।

ये तो पशु नर कहलाने, वाले लड़ते देखे हैं ।
हमने देश देश का शोणित, पी जाते देखे हैं ।।८५।।

ये तो पशु हैं किन्तु कभी, मानवता झगड़ा करती ?
कुछ अधिकारों पर पितु से, सुत; माता सुत से लड़ती ।।८६।।

पति-पत्नी तक तार प्रणय, बंधन का चटका देते ।
बन्धु सहोदर भी अवसर, पर रक्त कुण्ड भर देते ।।८७।।

गये स्वामिवर; उन गिरि सांडों के श्रंगों को लेकर ।
किया दूर उद्दंड मत्त दोनों, को धक्का देकर ।।८८।।

अतुल पराक्रम शाली स्वामिन, साहस धन्य तुम्हारा ।
बाल ब्रह्मचारी बलशाली, विक्रम धन्य तुम्हारा ।।८९।।

इन प्रचंड उत्ताप शाप से, सांडों का कर मर्दन ।
ऋषिवर तूने स्वयं किया, यौवन का मौन समर्थन ।।९०।।

त्याग चले यह धाम ग्राम, बलराम महर्षि पधारे ।
किया धेनु पय पान विप्र, बोले-सौभाग्य हमारे ।।९१।।

तज ऋषि ने बलराम चकेरी, जनपद पथ अपनाया ।
प्रातः काल हनोट हुआ, ऋषिराज दिवाकर आया ।।९२।।

-अष्टम सर्ग समाप्त ।।

आर्यसमाज का इतिहास

पंचम खण्ड-संघर्ष युग

९. आर्यसमाज और देश की राजनीति

अब हम आर्यसमाज के इतिहास की जिस सीमा पर पहुँच गये हैं वहाँ खड़े होकर यह देखना आवश्यक प्रतीत होता है कि जिस क्षेत्र में आर्यसमाज अपना कार्य कर रहा था उसमें अन्य कौन-सी शक्तियाँ देशवासियों को प्रभावित कर रही थीं । हमें यह भी देखना होगा कि उन शक्तियों का तथा आर्यसमाज का क्रिया-प्रतिक्रिया के सिद्धान्त के अनुसार एक दूसरे पर क्याय प्रभाव पड़ रहा था ?

जिस समय स्वामी दयानन्द जी सत्य की खोज में जंगलों और पहाड़ों में घूम रहे थे उस समय भारत की रंगस्थली पर एक रक्तपूर्ण क्रान्ति का अभिनय हो रहा था । स्वामी जी १८६० ई. में मथुरा पहुँच कर दंडी विरजानन्द के विद्यार्थी बने । उससे पूर्व का समय उन्होंने देश के भिन्न-भिन्न प्रदेश में सत्य ज्ञान की तलाश में घूम कर बिताया । ३० मई सन् १८५७ ई. के दिन मेरठ में उस क्रान्ति का सूत्रपात हुआ जो शीघ्र ही देश के बड़े भागों में फैल गई । प्रजा का शायद ही कोई भाग ऐसा रहा हो जो उससे अछूता रहा हो । जिन दिनों में और देश के जिस भाग में क्रान्ति की ज्वाला जाज्वल्यमान थी उन्हीं दिनों देश के लगभग उसी भाग में स्वामी दयानन्द सरस्वती जिज्ञासु बन कर घूम रहे थे । इसमें कोई सन्देह नहीं हो सकता कि उस महान् विद्रोह में जो रोमांचकारी घटनायें घटित हुई, उन्हें स्वामी जी ने आंखों से देखा और अनुभव किया होगा । यह कहना तो कठिन है कि स्वामी जी ने स्वयं उस राज्य क्रान्ति में भाग लिया या नहीं और लिया तो किस रूप में, परन्तु इसमें कोई सन्देह नहीं कि उनका हृदय क्रान्ति की घटनाओं से अवश्य प्रभावित हुआ होगा । स्वामी जी के ग्रन्थों में देशवासियों की दीन-हीन दशा के सम्बन्ध में जो गहरी व्यथा प्रकट होती है, उसमें तो क्रान्ति की प्रत्यक्ष देखी हुई घटनाओं की प्रतिछवि दिखाई देती है । महर्षि ने सत्यार्थप्रकाश में निम्नलिखित वाक्य लिखे थे:-

"कोई कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशीय राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है । अथवा मतमतान्तर के आग्रह से रहित अपने और पराये का पक्षपात शून्य, प्रजा पर माता-पिता के समान कृपा, न्याय और दया के साथ भी विदेशी राज्य पूर्ण सुखदायक नहीं हो सकता ।"

दूसरे स्थान पर आपने लिखा है:-

"जब से विदेशी इस देश में आकर राज्याधिकारी हुए तब से क्रमशः आर्यों के दुःख की बढ़ती होती जाती है ।"

इन तथा अन्य ऐसे ही स्थलों को पढ़ाने से प्रतीत होता है कि महर्षि ने स्वयं अपनी आंखों से उन यातनाओं को देखा था जो १८५७ और ५८ में माता-पिता के समान कृपा, न्याय और दया की घोषणा करने वाले विदेशी राज्य की ओर से भारतवासियों पर डाली गई ।

अभी अंग्रेजी पढ़े-लिखे भारतवासी सरकारी नौकरियों और ओहदों को स्वराज्य, स्वधर्म और स्वदेशी के आदर्श मान रहे थे । महर्षि के लिए राजनीति भी धर्म के लिए एक आवश्यक अंग था । सन् १८५७ और सन्

१८८५ के मध्यवर्ती समय में भारत में जो सामाजिक और राजनीतिक जागृति पैदा हुई, उस पर महर्षि के मौखिक और लिखित उपदेशों का न्यूनाधिक प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है ।

वह देश में जागृति का काल था । भारतवासी उस पीड़ा को अनुभव करने लगे थे, जो दासता की जंजीरों से उत्पन्न होती है । देश के अनेक प्रान्तों में सामाजिक और राजनीतिक जागृति ने स्थूल रूप धारण करना प्रारम्भ कर दिया जिसका परिणाम यह हुआ कि स्थान-स्थान पर अपनी मांगों को प्रकट करने के लिए सभा-समितियां स्थापित होने लगीं । सन् १८८५ में इंडियन नेशनल कांग्रेस की स्थापना हुई । यद्यपि बम्बई में होने वाले पहले अधिवेशन में सौ से भी कम अंग्रेजी पढ़े-लिखे प्रतिनिधि एकत्र हुए थे । परन्तु देशवासियों का असन्तोष इतना बढ़ चुका था कि दूसरे वर्ष तक वह संख्या कई गुना हो आई । कांग्रेस देश की राजनीतिक अभिलाषाओं का केन्द्र बनी ।

जब कांग्रेस की चर्चा उत्तर में पहुँची तब स्वाभाविक ही था कि आर्यसमाज के बहुत-से सभासद् उस ओर आकृष्ट होते । कांग्रेस का चौथा अधिवेशन १८८८ में प्रयाग में हुआ । उससे पंजाब से कई प्रतिनिधि शामिल हुए । उनमें से प्रमुख नाम लाला लाजपतराय का है । लालाजी लाहौर में जाने से पहले हिसार में वकालत करते थे । वहीं से उनको आर्यसमाज के साथ-साथ राजनीति के कार्य की ओर भी रूचि हो गई थी । आप हिसार के सार्वजनिक जीवन में बहुत अधिक भाग लेते थे । आप म्युनिसिपलिटी के चुनाव में निर्विरोध निर्वाचित हुए जहां आपकी अंग्रेजी अफसर से प्रायः झड़प रहती थी । लालाजी ने उन्हीं दिनों इटली के प्रसिद्ध देशभक्त मेजिनी का जीवन चरित्र उर्दू में लिखा था । उर्दू के पत्रों में राजनीतिक विषयों पर लिखने के अतिरिक्त लालाजी प्रान्त के अन्य नगरों की राजनीति में भी भाग लेते रहते थे । अंग्रेजी अफसर उसी समय से आपके राजनैतिक कार्यों को घबराहट की दृष्टि से देखते और आप से डरने लगे थे । कांग्रेस के अधिवेशन में सम्मिलित होने के लिए प्रयाग पहुंचने पर वहां कांग्रेसी नेताओं की ओर से लालाजी का भव्य स्वागत हुआ । आप और आपके मित्रों के प्रयाग पहुंचने से कांग्रेस के अधिकारियों का यह आशा हो गई कि पंजाब राजनीतिक आन्दोलन में किसी प्रान्त से पीछे न रहेगा ।

१८९३ ई. में लाहौर में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ । उसकी स्वागताधिकारिणी सभा में लाला जी के अतिरिक्त अन्य भी बहुत-से प्रमुख आर्यसमाजियों ने भाग लिया । उस समय तक कांग्रेस कोई राजविद्रोही संस्था नहीं मानी जाती थी । वह ऐसे देशभक्तों की संस्था थी जो सरकारी नौकरियों, धारा-सभा की सदस्यता या हाईकोर्ट की जजों से ऊपर कोई चीज नहीं मांगते थे । इस कारण बहुत-से ऊंचे सरकारी नौकर भी कांग्रेस की बैठकों में शामिल हो जाते थे । परन्तु बात यह थी कि उस समय के अंग्रेज हलके-से-हलके राजनीतिक आन्दोलन को भी नापसन्द करते थे । और उस पर राजद्रोह का लेबल लगाने को तैयार रहते थे । फलतः कुछ आर्यसमाजियों का कांग्रेस में सम्मिलित होना अनेक सरकारी अफसरों को बहुत अखरा । उन्होंने अपने विचारों को खुफिया सरकारी रिपोर्टों में प्रकाशित भी किया ।

सबसे पहले जिन लोगों ने आर्यसमाज पर राजविद्रोही होने का आरोप लगाया वे ईसाई पादरी थे । उस समय की सरकारी खुफिया फाइलों को देखने से प्रतीत होता है कि जब आर्यसमाज के प्रचार के कारण ईसाइयों

के प्रचार कार्य में बाधा पड़ने लगी तब उन्होंने झुंझला कर सरकार के कान भरने आरम्भ कर दिये। अंग्रेजी सरकार को आर्यसमाज के विरूद्ध भड़काने का सबसे बढ़िया उपाय यह था कि आर्यसमाज को एक राजद्रोही संस्था सिद्ध किया जाय । सत्यार्थप्रकाश के स्वराज्य और स्वदेशी सम्बन्धी उद्धरणों को हवाला देकर उन्होंने अधिकारियों को यह समझाने का यत्न किया कि स्वामी दयानन्द अंग्रेजी सरकार का विरोधी था और उसके अनुयायी राजद्रोही हैं ।

आर्यसमाज के विरूद्ध इसी हथकंडे को बर्तने का कई अन्य मतानुयायियों ने भी यत्न किया । १९०२ में सनातन धर्म के आलाराम नाम के एक संन्यासी ने एक ट्रैक्ट में यह लिखा था कि आर्यसमाज राजद्रोही संस्था है । इस पर आलाराम पर अभियोग चलाया गया । अभियोग में आलाराम अपराधी सिद्ध हुआ । फैसला देते हुए इलाहाबाद डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट मिस्टर पी. हैरिसन ने यह शब्दों में स्वीकारा था कि ''दयानन्द के उपदेशों का उद्देश्य लोगों के सुधार के लिए प्रेरित करना है ताकि वे इस योग्य हो सकें कि वे किसी दिन अपने देश का राज्य संभाल सकें... उनमें न तो हथियार उठाने का आदेश है और न युद्ध की घोषणा ।''

स्वदेश भक्ति को किसी देश और किसी समय में भी अपराध नहीं माना गया । विदेशी राज्य की यह विशेषता है कि उसमें अपनी मातृभूमि के प्रति भक्ति जैसे पवित्र भाव को भी अपराध माना जाता है । यही कारण है कि अंग्रेजी राज्य के अन्त तक भी सत्यार्थप्रकाश और आर्यसमाज को आवश्यकतानुसार राजद्रोही बतलाया जाता रहा । महर्षि दयानन्द स्वयं भारत भक्त थे । उनके ग्रन्थों में देश भक्ति कूट-कूट भरी हुई है । ऐसी दशा में यह स्वाभाविक ही था कि उनके अनुयायी देशसेवा के प्रत्येक कार्य में आगे रहते । ज्यों-ज्यों भारत का राष्ट्रीय आन्दोलन ऊंचा उठता गया त्यों-त्यों आर्य नर-नारियों का उसमें सहयोग भी बढ़ता गया ।

मैंने ऊपर लिखा है कि लाला लाजपराय जी के अतिरिक्त अन्य भी बहुत से आर्यसमाजी कांग्रेस में भाग लेने लगे थे परन्तु इसका यह अभिप्राय न समझना चाहिए कि उस समय (१८८५-१९००) आर्यसमाजों की अधिक संख्या कांग्रेस से सहमत थी या उसमें दिलचस्पी रखती थी । अधिक संख्या ऐसे लोगों की थी जो उससे सहमत नहीं थे । लाला लाजपतराय जी ने अपनी आत्मकथा में उस असहमति के दो कारण लिखे । पहला कारण यह लिखा है कि वे लोग यह विश्वास नहीं रखते थे कि कांग्रेस अंग्रेजी राज्य को हटाने में सफल होगी । उनका कहना था कि ''कांग्रेस की नींव कुछ अंग्रेजों ने डाली है और अंग्रेज अपने देश के हितैषी हैं, इसलिए यह कभी सम्भव नहीं कि कांग्रेस भारतवर्ष के लिए राजनीतिक स्वतन्त्रता प्राप्त करने में सफल हो । उन लोगों के कांग्रेस में न होने का, दूसरा कारण यह था कि उन्हें हिन्दू-मुसलमानों के मेल में विश्वास नहीं था । उनका विचार था कि हिन्दू-मुसलमानों के मेल का उद्योग हिन्दुओं के लिए हानिकारक है।'' लालाजी ने अपने आत्मचरित में लिखा है कि साधारण तौर पर लाहौर के आर्यसमाजी नेताओं की यही राय थी । धार्मिक प्रवृत्ति के आर्यसमाजी यह भी समझते थे कि उन्हें अपनी सारी शक्ति वैदिक धर्म के प्रचार में लगानी चाहिए । नौकरियों और ओहदों के लिए किये गये आन्दोलन में शामिल होना उन्हें व्यर्थ-सा प्रतीत होता था । अधिकतर आर्यसमाजियों की यह सम्मति तब तक कायम रही जब तक महात्मा गांधी ने उसके नेता बन कर उसके कार्यक्रम को ऊँचे स्तर पर नहीं पहुँचाया ।

अथ गृहाश्रमसंस्कारविधिं वक्ष्यामः

(महर्षि दयानन्द सरस्वती महाराज ने संस्कार विधि में सोलह संस्कारों की विधि तो दी ही है, विवाह संस्कार के साथ गृहस्थ के कर्तव्यों के रूप में भी बहुत कुछ लिखा है, जो सामान्यतः विवाह संस्कार के समय बताया नहीं जाता है जिसका कारण अधिकांशतः समय की कमी ही होता है। यह गृहस्थ को स्वर्ग बनाने का साधन है। इसलिए इसे पत्रिका में धारावाहिक रूप से दिया जा रहा है। इस प्रकरण के अर्थसहित १७ मंत्र के आगे पढ़ें–संपादक)

ज्यायस्वन्तश्चित्तिनोमा वि यौष्ट संराधयन्तः सधुराश्चरन्तः।
अन्योअन्यस्मैवल्गु वदन्तएतसध्रीचीनान्वः समंनसस्कृणोमि ।।१८।।

अर्थः–हे गृहस्थादि मनुष्यों! तुम **(ज्यायस्वन्तः)** उत्तम विद्यादि गुणयुक्त, **(चित्तिनः)** विद्वान् सज्ञान, **(सधुराः)** धुरन्धर होकर **(चरन्तः)**विचरते, और **(संराधयन्तः)** परस्पर मिलके धन–धान्य राज्य समृद्धि को प्राप्त होते हुए (**मा वियौष्ट**) विरोधी वा पृथक्–पृथक् भाव मत करो।**(अन्यः)** एक **(अन्यस्मै)** दूसरे के लिये **(वल्गु)** सत्य मधुर भाषण **(वदन्तः)** कहते हुए एक–दूसरे को **(एत)** प्राप्त होओ । इसीलिये **(सध्रीचीनान्)** समान लाभाऽलाभ से एक–दूसरे के सहायक, **(संमनसः)** ऐकमत्यवाले **(वः)** तुम को **(कृणोमि)** करता हूं, अर्थात् मैं ईश्वर तुमको जो आज्ञा देता हूं, इस को आलस्य छोड़कर किया करो ।।१८।।

समानी प्रपा सह वोऽन्नभागः समाने योक्त्रोसह वो युनज्मि।
सम्यञ्चोऽग्निं सपर्यतारा नाभिमिवाभितः ।।१९।।

–अथर्व कां०३ ।सू०३० ।मन्त्र१–७।।

अर्थः –हे गृहस्थादि मनुष्यो ! मुझ ईश्वर की आज्ञा से तुम्हारा **(प्रपा)** जलपान स्नानादि का स्थान आदि व्यवहार **(समानी)** एक सा हो। **(वः)** तुम्हारा **(अन्नभागः)** खान–पान **(सह)** साथ हुआ करे। **(वः)** तुम्हारे **(समाने)** एक से **(योक्त्रो)** अश्वादि यान के जोते **(सह)** संगी हों। और तुम को मैं धर्म्मादि व्यवहार में भी एकीभूत करके**(युनज्मि)** नियुक्त करता हूँ। जैसे **(आराः)** चक्र के आरे **(अभितः)**चारों ओर से **(नाभिमिव)** बीच के नालरूप काष्ठ में लगे रहते हैं, अथवा जैसे ऋत्विज् लोग और यजमान यज्ञ में मिलके **(अग्निम्)** अग्नि आदि के सेवन से जगत् का उपकार करते हैं, वैसे **(सम्यञ्चः)** सम्यक् प्राप्तिवाले तुम मिलके धर्मयुक्त कर्मों को **(सपर्यत)** एक–दूसरे का हित सिद्ध किया करो ।।१९।। (क्रमश)

ओ३म्

(अन्तर्जातीय विवाह स्वयं समस्या है, कई अन्य समस्याओं की जड़ है, स्वयं में कई समस्याओं समाधान है, समाज को जोड़ने का साधन है या तोड़ने वाला कारक? असंख्य अन्तर्जातीय विवाह संस्कारों में पौरोहित्य कर चुके इस लेखमाला के प्रबुद्ध आर्यसमाजी लेखक इस पर विचार कर रहे हैं। उन्होनें ऑखों में ऑसू भरे माता पिताओं, खासकर लड़की के माता पिताओं को आर्यसमाज के चक्कर काटते और बेटी का पता देने की गुहार लगाते भी देखा है। साथ ही निर्दयी और बुद्धिहीन समाज के ठेकेदारों से बचकर आर्यसमाज की भारण आए निरीह युवा जोड़ों को भी। 'आर्यसमाज' के नाम पर 'आयसमाज' चलाने वाले लोगों के द्वारा मात्र धन के लिए विवाह प्रमाण पत्र जारी करने वाले लोगों से आर्यसमाज के नाम को बट्टा लगते भी देखा है। प्रथम भाग में लेखक कर रहे है.....सं0)

युवा पीढ़ी से कुछ तीखे प्रश्न

मैं अपनी बात का प्रारंभ रहीम के एक बहुमूल्य दोहे के साथ करना चाहता हूँ। पाठकगण सोच कर देखें कि इस दोहे को लिखते समय रहीम की मनःस्थिति क्या रही होगी

'कहि रहीम मुश्किल परी, गाढे दोऊ काम।
सांचे ते तौ जग नहीं, झूठे मिले ना राम।।'

रहीम के अनुसार सच बोलें तो संसार के नहीं रहते और झूठ बोलें तो ईश्वर नहीं मिलता। करें तो क्या करें? रहीम की यह मनोव्यथा तब से लेकर आज तक हर उस व्यक्ति को व्यथित करती है जो सत्य बोलना और सत्य ही सुनना चाहता है।

बुद्धिजीवी– विशेषतया साहित्यकार, लेखक व कविगण अपने माने हुए सत्य को ही परम सत्य सिद्ध करने में ही लगे रहते हैं। भिन्न–भिन्न विचारधारा वाले वालों के साथ बैठकर विचार–विमर्श की परंपरा अपनी अंतिम सांस ले चुकी लगती है। आज विचार भिन्नता को बुद्धिजीवी कहलाने वालों में विरोध की संज्ञा दी जाती है। यही कारण है कि किसी भी समस्या के विविध पक्षों का संतुलित विश्लेषण हमारी कार्यशैली में नहीं दिखता। समाज के जीवन–मरण से जुड़े गंभीर प्रश्नों को खिलवाड़ की तरह लिया जाता है। पता नहीं क्यों हमारा बुद्धिजीवी वर्ग यह सोच और देख नहीं पा रहा है कि भारत चाहे समृद्धि और संसाधनों की दृष्टि से विश्व की तीसरी, दूसरी या पहली शक्ति बन जाए; वैज्ञानिक उन्नति करते हुए चंद्रमा पर कॉलोनी बना ले; लेकिन जातिवाद और जनसंख्या विस्फोट की अनदेखी करते रहे तो एक दिन आपस के संघर्ष और भुखमरी के हाथों हमारा सब कुछ नष्ट भ्रष्ट हो कर रह जाएगा। इस सच से ऑखें बंद करके आरक्षण के लिए जातीय वैमनस्य को जैसे–तैसे ढोते रहना तथा जनसंख्या नियंत्रण को समुदाय विशेष के साथ जोड़कर देखना देश के लिए आत्मघाती सिद्ध होने वाले हैं ।

ऐसी गंभीर समस्याओं के स्थाई समाधान छोटी सोच या जाति, समुदाय व संप्रदाय में बँटी सोच से नहीं निकाले जा सकते! मानवतावादी सोच रखकर सत्य के लिए संघर्ष करने का साहस रखने वाले उदारचेता लोगों को ऐसी विकट समस्याओं के लिए काम करना पड़ेगा। ऐसी ही एक विकट समस्या है **–अंतर्जातीय वैवाहिक संबंध**। लेखक भारत की प्राचीन वैदिक संसति का सच्चा सेवक, प्रचारक और प्रतिनिधि है। वैदिक संस्कृति वर्तमान जातिवाद को एक सामाजिक कुरीति के रूप में मानती है। वैदिक संस्कृति में जन्मना जातिवाद, ऊँच–नीच के भेदभाव के लिए कोई स्थान नहीं है।

वैदिक संस्कृति का संवाहक आर्यसमाज आज भी संविधान की मर्यादा में रहकर अंतर्जातीय विवाह कराते हैं। मगर समाज में इसे लेकर जो अप्रिय वातावरण बन रहा है, उस पर आज कुछ गंभीर प्रश्न खड़े होते हैं। ध्यान रहे कि जातीय विवाहों की समस्या कोई सवर्ण अवर्ण को लेकर ही नहीं है; जाट–राजपूत, ब्राह्मण–वैश्य में भी है। आरक्षित वर्ग में आने वाले यादव–मीणा, कुम्हार–धोबी आदि सब मिलकर आरक्षण के नाम पर भले ही लड़लें, लेकिन एक दूसरे के साथ विवाह–संबंध करने के नाम पर यह एक दूसरे से उतने ही दूर है–जितने 'ब्राह्मण और जाट' या 'जाट और यादव'!

संविधान में आरक्षण प्राप्त जातियों के लोग भी आपस में विवाह संबंध करने लग जाएँ तो देश की बहुत बड़ी समस्या हल हो जाए। लगता है, कोई भी इस दिशा में एक कदम आगे बढ़ाने के बारे में सोचना ही नहीं चाहता। आश्चर्य तो देखिए, कि सिद्धांत के रूप में जातिवाद का समर्थन आज कोई सार्वजनिक रूप से नहीं कर सकता है; मगर व्यावहारिक स्तर पर जातिवाद मिटाने के लिए कोई एक कदम भी आगे बढ़ाने का साहस नहीं दिखा पाता। इसे कहते हैं विचारों और भावनाओं का संघर्ष! यह है परंपरा और प्रगतिशीलता की खींचातानी! हमें इनसे ऊपर उठना ही होगा!

क्या कारण है कि जन्म आधारित जातिवाद के विरुद्ध अभियान चलाकर गत सौ सवा सौ वर्षो से अंतर्जातीय विवाह कराने में सबसे आगे रहने वाले आर्यसमाज के एक सेवक को आज अंतर्जातीय विवाहों को लेकर प्रश्न खड़े करने पड़ रहे हैं? अभी बरेली के एक विधायक की पुत्री ने आरक्षित वर्ग में आने वाली किसी (अज्ञात) जाति के युवक से प्रेम विवाह कर लिया। टीवी चैनलों से पता चला कि उन दोनों ने अपने अपने माता–पिता से इस संबंध में कोई चर्चा नहीं की। लड़के के पिता का कहना है कि वह मुझसे बात करता तो मैं लड़की के पिता से चर्चा अवश्य करता! यह सब जानकर भी किसी ने उन दोनों से यह नहीं पूछा कि **क्या १८ वर्ष की आयु के बाद माता–पिता इतने अप्रासंगिक हो जाते हैं कि विवाह जैसे महत्वपूर्ण विषय को लेकर उनकी ऐसी घोर उपेक्षा कर दी जाए? क्या१८ वर्ष की पुत्र पुत्रियों का माता पिता के प्रति कोई उत्तर दायित्व नहीं बनता? क्या१८ वर्ष के बाद पुत्र पुत्रियों को १८ वर्ष तक हमारा सर्वविध पालन पोषण करने वाले माता–पिता के प्रति इतना कृतघ्न हो जाना चाहिए कि उनकी**

मान मर्यादा को पैरों तले कुचल दिया जाए?

संभवत २०१० के आसपास की बात है। टीवी पर हरियाणा में **'ऑनर किलिंग'** विषय पर चर्चा चल रही थी। युवा पीढ़ी से विचार जानने के लिए युवक–युवतियॉं आमंत्रित थे। संचालक (एंकर) ने एक युवक से पूछा कि माता–पिता का कहना यह है कि हमारे पुत्र पुत्रियां समाज की मान्यताओं के विरुद्ध जाकर विवाह करते हैं तो हमें समाज में भला बुरा सुनना पड़ता है, अपमानित होना पड़ता है। क्या युवा पीढ़ी को उनकी इस स्थिति पर नहीं सोचना चाहिए? इस प्रश्न पर एक युवक ने जो उत्तर दिया, उसे सुनकर मेरा हृदय कॉप उठा! युवक कहता है–'यह समस्या उनकी है, हमें इससे क्या लेना देना? अगर उनके सामने ऐसी समस्या आती है तो वह स्वयं जाकर किसी कुऍं तालाब में डूब कर आत्महत्या कर ले! हमारी जान क्यों लेते हैं?' तब भी वहॉं किसी ने उसे डॉट फटकार नहीं लगाई! **हाय! किस युग में जी रहे हैं हम?** माना कि हमारे माता–पिता परंपरा से चली आ रही समाज की कुरीतियों में जकड़े हुए हैं। तो शिक्षित और विचारशील युवकों को मिलकर हमें जन्म और जीवन देने वालों माता पिता को समझा कर विश्वास में नहीं लेना चाहिए?

मेरे पास भी ऐसे कई युवक युवतियॉं विवाह के लिए आते रहे हैं। मैं उन्हें कहता हूँ कि चोरी–छिपे विवाह कराकर इधर–उधर भागते फिरोगे! इससे अच्छा रहेगा कि कहीं किन्ही प्रभावशाली लोगों, रिश्तेदारों के द्वारा पारिवारिक सहमति बनाओ! समाज में शिक्षित विचार वान् और उदारतावादी व्यक्ति भी होते हैं! अगर आप उनसे जाकर मिलो तो या तो वे आपकी गलती होगी तो आपको समझाएंगे या परिवार वालों को समझाएंगे!

हम सड़कों व नालियों की सफाई और पार्कों की देखरेख तक के लिए समितियां बना लेते हैं। क्या दो पीढ़ियों के वैचारिक टकराव को दूर करके परिवार समाज में अपनापन बनाए रखने के लिए ऐसा कोई समूह नहीं बनाया जा सकता? हमें इस दिशा में भी कुछ करना चाहिए!

बड़ी कड़वी सच्चाई यह है कि हमारी युवा पीढ़ी को नैतिक शिक्षा और चारित्रिक संस्कार आज कहीं से विधिवत नहीं मिल पा रहे हैं। एक सुखदायक आश्चर्य देखिए कि सभी विद्यालयों से टी.सी. व अंक तालिका के साथ एक चरित्र प्रमाण पत्र भी देना होता है। क्या किसी विद्यालय में चरित्र निर्माण की दृष्टि से कुछ सिखाया पढ़ाया जाता है? यदि नहीं तो प्रमाण पत्र क्यों? जो सिखाया पढ़ाया ही नहीं, उसका प्रमाण पत्र किस आधार पर दिया जाए? निष्कर्षतः आज की पीढ़ी इतनी संस्कार विहीन हो जाए कि अपने जन्मदाता, पालक –पोषक, सुख–दुख में साथ हॅसने रोने वालों की भावनाओं, पारिवारिक व सामाजिक मान–सम्मान की चिंता करना ही छोड़ दें और हम बुद्धिजीवी कहलाने वाले, लिखने पढ़ने, सम्मेलन–समारोह करने में ही लगे रहे तो यह अपने कर्तव्यों की आत्मघाती उपेक्षा सिद्ध होगी! माता–पिता, भाई–बहन जैसे रक्त संबंधी टूट कर बिखरने लगेंगे तो ऐसे लोग सामाजिक सद्भाव और राष्ट्रीय अखंडता की सुरक्षा कैसे कर पाएंगे? जारी रहेगा.....

सामूहिक विवाह संस्कार

आर्यसमाज महर्षि पाणिनि नगर जोधपुर के सानिध्य में जोधपुर के आर्यसमाजों व स्मृति भवन न्यास के सदस्यों द्वारा सोलह युगल का सामूहिक विवाह संस्कार सम्पन करवाया। स्मृति भवन न्यास की ओर से प्रत्येक युगल को सत्यार्थप्रकाश भेंट की गई एवं माता चन्द्रकांताजी भाटी द्वारा पॉच पॉच सौ रुपये प्रत्येक वधु को आशीर्वाद स्वरूप प्रदान किये।

वैदिक विधि से विवाह संस्कार श्रीमान् शिवरामजी शास्त्री के पौरोहित्य में संम्पन हुवा।

वेदमंत्र पाठ प्रतियोगिता संपन्न

सुरेशचन्द्र गुप्ता चेरिटेबल ट्रस्ट एवं आर्य समाज हिरण मगरी सकटर ४ उके सभगार में वेदमंत्र पाठ प्रतियोगिता का आयोजन हुआ। इस अवसर पर निर्णायक श्री अशोक आर्य ने वर्तमान संदर्भों में वैथ्दक ज्ञान की उपादेयता पर प्रकाश डाला। उन्होंने कहा कि ना केवल मनुष्य अपितु प्राणिमायत्र के कल्याण

के लिए ईश्वर की अमृतवाणी है वेद। मनुष्य के लिए इस संसार में व्यवहार करने की नियमावली हैं वेद। सृष्टि में उपलब्ध समस्त ज्ञान वेद की श्रेणी में आता है। ज्ञान का आधार विवेक है और यही विवेक मानव को अन्य प्राणियों से श्रेष्ठ बनाता है।

प्रतियोगिता दो स्तर पर आयोजित की गयी। कनिष्ठ वर्ग ने डीपीएस की सुश्री अन्वेषा नन्दी प्रथम, दयानन्द कन्या विद्यालय की सुश्री कंचन वैष्णव और नीमा गमेती ने क्रमशः द्वितीय व तृतीय स्थान प्राप्त किया।

दल वैजयन्ती कन्या विद्यालय को मिली। इसी तरह वरिष्ठ वर्ग में सेंट ऐन्थॉनीज विद्यालय की यशा जैन प्रथम, तनवी जैन द्वितीय एवं मिरैंडा सीनियर स्कूल की भूमिका मेनारिया तृतीय स्थान पर रहीं। दल वैजयन्ती सेंट ऐन्थॉनीज को दी गयी। कनिष्ठ वर्ग में ३६ एवं वरिष्ठ वर्ग में ११ विद्यार्थियों ने भाग लिया। प्रतियोगिता में उदयपुर के २५ विद्यालयों ने भाग लिया।

निर्णायकमंडल में अशोक जी आर्य, प्रो. डॉ. बी.एल. जैन एवं सत्यप्रिय शास्त्री थे। श्रीमती शारदा गुप्ता द्वारा आयोजित इस प्रतियोगिता की अध्यक्षता प्रो. डॉ. अमृतलाल तापड़िया ने की तथा संचालन श्रीमती ललिता मेहरा ने किया।

पाक से आए हिन्दू शरणार्थियों की बस्ती में गणतंत्र दिवस

जोधपुर के निकट आंगणवा गाँव,जसवन्त सागर बांध के निकट कच्चे झोंपड़ों में रह रहे पाक हिन्दू विस्थापितों की बस्ती मे आर्यसमाज,महर्षि पाणिनिनगर द्वारा आर्यवीर दल की शाखा संचालित की जाती है, जिसमें बच्चों को आत्मरक्षा हेतु कराटे, जिम्नास्टिक व खेलकुद के साथ भारतीय संस्कृति, सभ्यता व संस्कारों का पाठ पढ़ाया जा रहाहैं। आर्यसमाज के प्रधान कैलाशचन्द्र ने बताया कि आर्यसमाज ने २६जनवरी को भारत का गणतंत्र दिवस हिन्दू शरणार्थियों की बस्ती में मनाया गया। गणतन्त्र के उत्सव में वहाँ निवासियों ने भाग लिया। बच्चों द्वारा जिम्नास्टिक, योगासन व अन्य खेलकुद का आकर्षक प्रदर्शन किया गया। विस्थापित परिवारों को अपने बच्चों को प्रदर्शन करते देखकर प्रसन्नता हुई। विस्थापित परिवारों की ओर से श्री हेमसिंह ने आभार जताया। गणतंत्र दिवस के इस अवसर पर छोटे–छोटे बच्चों द्वारा देशभक्ति गीत एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत किया गया। आर्यसमाज द्वारा पारितोषिक वितरण किया गया। सभी आगंतुगकों में मिठाईयां वितरित कर प्रसन्नता अभिव्यक्त की गई।

महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृतिभवन न्यास के तत्वाधान में श्रीमदनलाल तँवर के नेतृत्व में विद्यालयों में वैदिक प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता हेतु पुस्तकें वितरित करके, मार्गदर्शन करके परीक्षा लेकर, अग्रणी विद्यार्थियों को पुरस्कृत किया जा रहा है
जिससे हजारों विद्यार्थी लाभान्वित हो चुके हैं।

Postal Reg. Jodhpur/ 434/2018-20

Date of Posting 9,10-02-2020
Date of Print 5-02-2020

पंचपरीक्षा

(महर्षि ने सत्यार्थ प्रकाश में पठनीय सामग्री की पाँच परीक्षाएँ बताई है जिनका किसी भी ग्रंथ, उपदेश या शिक्षा की उपादेयता और सच्चाई जानने में प्रयोग करके जहरीले ग्रंथों, उपदेशों व शिक्षा का त्याग कर मानवता का भला कर सकते हैं।)

''परीक्षा पाँच प्रकार से होती है–

एक–जो–जो ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव और वेदों से अनुकूल हो वह–वह सत्य और उससे विरुद्ध असत्य है।

दूसरी– जो–जो सृष्टि क्रम से अनुकूल वह–वह सत्य और जो–जो सृष्टि क्रम से विरुद्ध है वह सब असत्य है। जैसे–कोई है 'विना माता पिता के योग से लड़का उत्पन्न हुआ' ऐसा कथन सृष्टि क्रम से विरुद्ध होने से सर्वथा असत्य है।

तीसरी– 'आप्त' अर्थात् जो धार्मिकविद्वान्, सत्यवादी, निष्कपटियोंका संग, उपदेश के अनुकूल है वह–वह ग्राह्य और जो–जो विरुद्ध वह–वह अग्राह्य है।

चौथी– अपने आत्मा की पवित्रता विद्या के अनुकूल अर्थात् जैसा अपने को सुख प्रिय और दुःख अप्रिय है वैसे ही सर्वत्रा समझ लेना कि मैं भी किसी को दुःख वा सुख दूँगा तो वह भी अप्रसन्न और प्रसन्न होगा।

और पाँचवीं–आठों प्रमाण अर्थात् प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, शब्द, ऐतिह्य, अर्थापत्ति, सम्भव और अभाव। ...''

सत्वाधिकारी महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास के लिए प्रकाशक व मुद्रक सिंह भाटी द्वारा महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन, 0291-2516655 महर्षि दयानन्द मार्ग, मोहनपुरा पुलिस पास जोधपुर (राज.) से प्रकाशित एवं सैनिक प्रिण्टर्स, मदार मौहल्ला केरू हाऊस जोधपुर फोन नं. 9829392411 से मुद्रित।
सम्पादक फोन नं. 9460649055

Book-Post